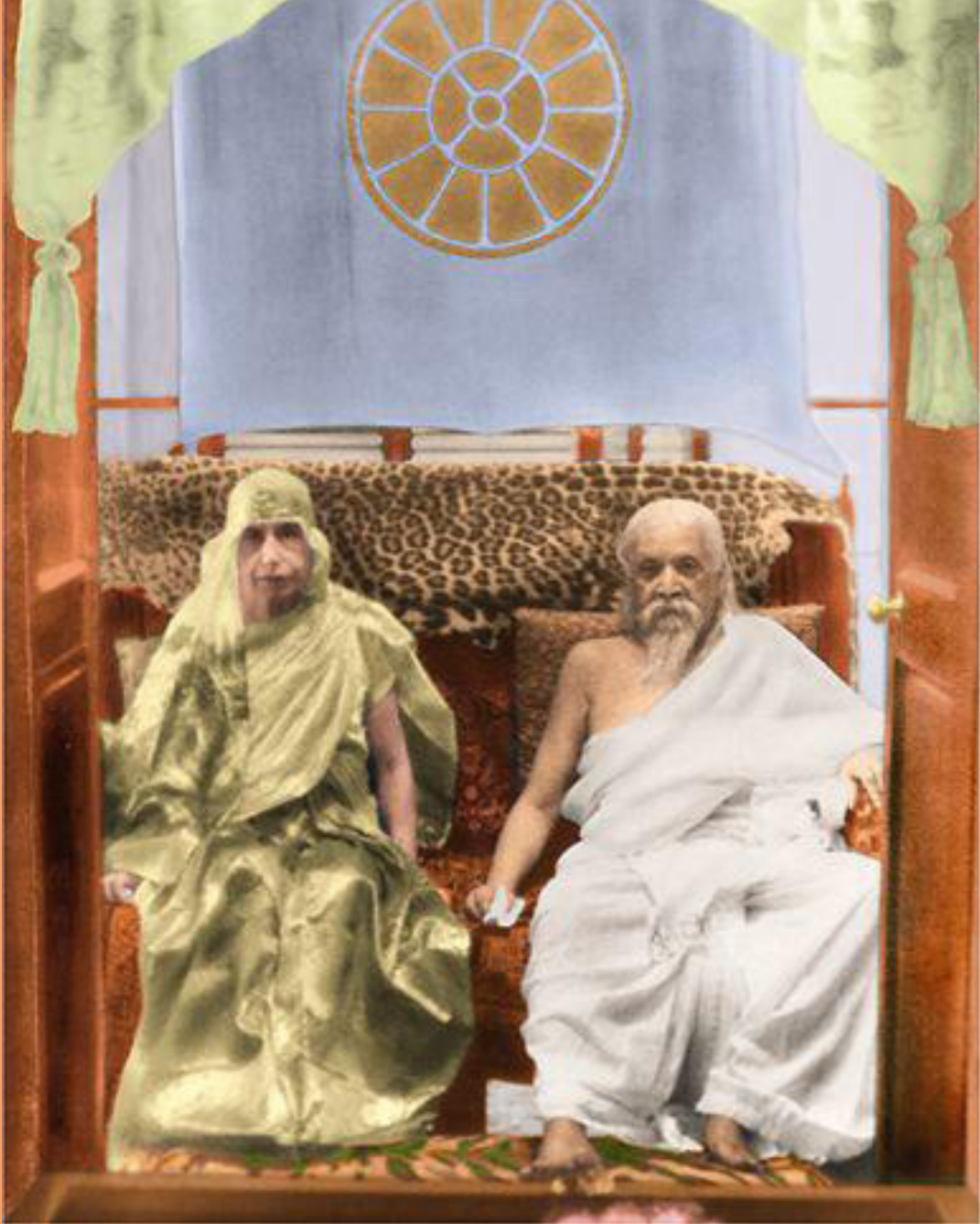


श्री अरविन्द कर्मधारा



जाग ओ आत्मा ! काल और मृत्यु पर विजय प्राप्त
कर !

24 नवम्बर 2017

वर्ष 47

अंक 4

श्री अरविन्द कर्मधारा

श्री अरविन्द आश्रम-
दिल्ली शाखा का मुखपत्र

24 नवम्बर 2017-वर्ष-47-अंक-4

संस्थापक

श्री सुरेन्द्रनाथ जौहर फकीर'

सम्पादक

त्रियुगी नारायण

सहसम्पादन

रूपा गुप्ता

विशेष परामर्श समिति

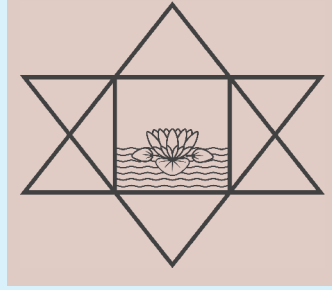
कु० तारा जौहर, सुश्री रंगम्मा

ऑनलाइन पब्लिकेशन ऑफ श्री अरविन्द आश्रम
दिल्ली शाखा (निःशुल्क उपलब्ध)

कार्यालय

श्री अरविन्द आश्रम दिल्ली-शाखा
श्री अरविन्द मार्ग, नई दिल्ली-110016
दूरभाष: 26524810, 26567863
आश्रम वैबसाइट
(www.sriarobindoashram.net)

निःशुल्क पत्रिका के लिये कृपया सब्सक्राइब करें-
sakarmdhara@gmail.com



अतिमानव

अतिमानव कौन है?
वह जो जड़-तत्त्व पर ही
केन्द्रित, सब से पृथक् इस
मनोमय मानव-सत्ता से
ऊपर उठ सकता हो और
भागवत-शक्ति, भागवत-
प्रेम और आनन्द तथा
भागवत-ज्ञान को प्राप्त
करके विराट् दिव्य पुरुष
बन सकता हो।

यदि तू इस सीमाबद्ध
मानुषी अहं को बनाये
रखे और फिर अपने को
अतिमानव समझे तो
अपने ही मिथ्याभिमान
का मूर्ख दास है, अपनी ही
व्यक्तिगत शक्ति के हाथों
का खिलौना है और अपनी
भूल-भ्रांतियों का यन्त्र है।

श्रीअरविन्द

शुभारम्भ

जब, तुम्हारे हृदय और विचार में, तुम मुझमें व श्रीअरविन्द में कोई भेद नहीं करोगे- जब श्रीअरविन्द के बारे में सोचना मेरे बारे में सोचना होगा- और मेरे बारे में सोचना श्रीअरविन्द के विषय में अनिवार्य रूप में सोचना होगा, जब एक के दर्शन का अर्थ अनिवार्यतः दूसरे का दर्शन होगा- एक ही व्यक्ति के रूप में...तब तुम जानोगे कि तुम अतिमानसिक शक्ति व चेतना की ओर उद्घाटित होना प्रारम्भ कर रहे हो।

श्रीमाँ

इस अंक में...

1. ॐ आनन्दमयी चैतन्यमयि सत्यमयि परमे (प्रार्थना और ध्यान)	3	14. अमृत कण श्रीमाँ	26
2. सम्पादकीय	4	15. चाचाजी के पावन प्रसंग नलिन धोलकिया	27
3. सिद्धि दिवस छोटे नारायण शर्मा	5	16. हिमालय का फ़क्कीर के. एन. वर्मा	30
4. पैसा एक अभिशाप-पैसा एक वरदान! श्रीमाँ	8	17. मातृ गुडविल स्टोर सोनी	32
5. ओम कान्फ़रेन्स (The all us Meet) रिपोर्ट-डॉ० अंजू खन्ना हिन्दी अनुवाद-रूपा गुप्ता	9	18. बोध-विनोद सुरेन्द्रनाथ ज़ौहर	33
6. भगवान के प्रति समर्पण श्री माँ	11	19. आश्रम में पिछले तिमाही के कार्यक्रम	35
7. गीतांजलि रविन्द्रनाथ टैगोर	12	20. हमारी गतिविधियाँ	36
8. भगत रविदास सुरेन्द्रनाथ ज़ौहर	13		
9. बुरा ना मानो ज्ञानवती गुप्ता	15		
10. अचंचलता नीरवता	16		
11. प्रेम	17		
12. सच्चाई श्री मातृवाणी	18		
13. साविली विमला गुप्ता	21		

ॐ आनन्दमयी चैतन्यमयि सत्यमयि परमे

(प्रार्थना और ध्यान)



प्रभो, केवल तू ही सत्य है, बाकी सब भ्रम है, क्योंकि जब मनुष्य तेरे अन्दर निवास करता है, तभी वह सब

वस्तुओं को वस्तुतः देखता और समझता है, तेरे पूर्ण ज्ञान से कुछ भी बाहर नहीं, किन्तु वहाँ सब कुछ का रूप और ही होता है; कारण, साररूप में सब कुछ तू ही है, सब कुछ तेरे कार्य का, तेरे महान हस्तक्षेप का फल जो ठहरा। घोर-से-घोर अन्धकार में भी तूने तारा चमका दिया है

हे प्रभु! प्रेम के दिव्य स्वामी, तू सनातन विजेता है। जो अपने-आपको तेरे साथ पूर्ण समस्वरता में ले आते हैं, जो केवल तेरे लिये तथा तुझे ही आधार मानकर जीते हैं, केवल वे

ही प्रत्येक विजय प्राप्त कर सकते हैं। क्योंकि तुझमें ही है परम शक्ति-पूर्ण निष्कामता, सम्पूर्ण पार-दृष्टि और सर्वोच्च हितकामना की शक्ति।

तुझमें तथा तेरे द्वारा सब कुछ रूपान्तरित हो जाता है तथा अपने महिमामय रूप को प्राप्त होता है; तुझमें ही सभी रहस्यों तथा सभी शक्तियों की कुञ्जी है। परन्तु तुझे कोई प्राप्त केवल तभी करता है जब वह तुझमें ही निवास करने के अतिरिक्त और कुछ नहीं चाहता, केवल तेरी ही सेवा करना चाहता है, तेरे ही दिव्य कर्म को अधिक शीघ्रता से तथा अधिक लोगों के कल्याण के लिये सफल करना चाहता है।

ऐसी कृपा कर कि हमारी भक्ति अधिकाधिक बढ़ती जाये। हमारा आत्मनिवेदन अधिकाधिक पूर्ण होता जाये और तू, जो पहले से ही यथार्थ रूप में स्वामी है, कार्य-रूप में भी जीवन का स्वामी बन जाये।

-श्री माँ



सम्पादकीय

24 नवम्बर श्री अरविन्द योग के इतिहास में एक महत्वपूर्ण दिन है। इसी दिन सन् 1923 ईस्वी वर्ष को श्री अरविन्द एकांत में चले गये। उस दिन एक विशेष अवतरण हुआ जब कि श्री कृष्ण की चेतना शरीर में उतर आयी और अतिमानसी सिद्धी का मार्ग खुल गया।

विश्व की उत्पत्ति के प्रारम्भ में परमात्मा स्वयं ही व्याप्त था। परमात्मा स्वयं जड़ तत्व के रूप में प्रगट हुए। इस जड़ तत्व में प्राणशक्ति, मनशक्ति और परमात्मा की अभेदकारी अतिमानसशक्ति प्रगाढ़ रूप में व्याप्त थी। धीमे धीमे जड़ तत्व में प्राणशक्ति का आवर्तन हुआ जिससे वनस्पति और बाद में विशालकाय प्राणियों का सर्जन हुआ। उसके लाखों वर्षों बाद जन्मी मनःशक्ति जन्मी और उससे जो विकास हुआ वह आज की मानव जाति है। इसका अस्तित्व तो हुआ परंतु यह पूर्ण चेतना वाली जाति नहीं है। श्री अरविन्द ने इस पूर्ण चेतना के अवतरण की साधना की। उध्व में से अतिमानसिकशक्ति इस स्थूल देहकोषों में उतर कर सक्रिय बने, तो ही कोषों में, जड़ तत्व में प्रगाढ़ रूप से रची ये चेतना जाग्रत हो जाये और तभी मानव देह का पूर्ण रूपांतरण संभव हो सके। यह देह प्राण और मन की शक्ति से नहीं बल्कि परमात्मा कीशक्ति से संपादित होती है और यह लुटिरहित तथा विकृति रहित होती है।

श्री अरविन्द की साधना स्थूल देह कोषों में शक्ति का अवतरण और प्रगाढ़ शक्ति का आरोहण करने की भागीरथ साधना थी। जिसके बारे में आप इस अंक के लेख 'सिद्धि दिवस' विस्तार से जान सकेगें।

साथ ही आज के युग में सच्चाई और पैसे से सम्बन्धित उलझनों को श्रीमां की लेखनी 'सच्चाई' व 'पैसा एक अभिशाप, पैसा एक वरदान' सुलझाने में मदद करती हैं।

साधना हेतु और भी अनेक महत्वपूर्ण मार्गदर्शन व आध्यात्मिक जानकारीयों से भरपूर श्री अरविन्द कर्मधारा का यह अंक आशा है आपके मानस को नवीन चेतना व उत्साह देगा।

-आपकी प्रतिक्रियाओं व विचारों का स्वागत है।

रूपा गुप्ता



हरेक मनुष्य में दुबका हुआ पशु रंचमाल असावधानी पर प्रगट होने के लिये तैयार रहता है। इसका एक ही उपाय है सतत जागरूकता।

-श्रीमाँ

सिद्धि दिवस

छोटे नारायण शर्मा

सन् 1923 ईस्वी श्री अरविन्द योग के इतिहास में एक महत्वपूर्ण वर्ष है। इसी वर्ष 24 नवम्बर को श्री अरविन्द एकांत में चले गये। उस दिन एक विशेष अवतरण हुआ जब कि श्री कृष्ण की चेतना शरीर में उतर आयी और अतिमानसी सिद्धी का मार्ग खुल गया।

कुछ पहले से ही इस साल आश्रम के जीवन में अनदेखे एक ऐसे परिवर्तन का आरंभ हुआ जो अत्यंत ही सहजता से संपादित होता गया। श्री माताजी के पास कुछ साधिकायें ध्यान के लिये जाने लगीं, पीछे कुछ साधक भी उसमें शामिल होने लगे। धीरे-धीरे आश्रम का बाहरी विधान माताजी की ओर अभिमुख हो रहा था। और 24 नवम्बर के बाद श्री अरविन्द जब बिलकुल एकांत में चले गये तब तो आश्रम के संचालन का सारा भार ही श्री माँ के ऊपर आ पड़ा।

इस साल श्री अरविन्द ज्यों-ज्यों लोगों से विलग, एकांतनिष्ठ हो रहे थे लोगों में यह विश्वास घर कर रहा था कि एक ऊँची चेतना का अवतरण होने ही वाला है। वायुमंडल भी धीरे-धीरे दूसरे तरह का हो रहा था। व्यक्तिगत रूप से लोगों को कई तरह के अनुभव भी हो रहे थे। श्री अरविन्द जो ध्यान के लिये साधारणतः अपराह्न के चार बजे आ जाया करते थे, अब कभी-कभी 6 बजे आने लगे। कभी-कभी रात के आठ बजे और एक बार तो वे आधी रात के बाद दो बजे आये। लगता था उनकी सारी शक्ति एक विशेष प्रयत्न में लगी हुई है। साधकों के साथ संबंध तो अनिवार्य था ही, फिर भी वे जो प्रयत्न कर रहे थे, उसमें उनकी तल्लीनता स्पष्ट थी। कुछ लोगों के लिये यह अत्यंत ही भयावह बात थी। श्री अरविन्द उनसे दूर हो रहे थे। कहीं वे

अनंत के किसी अतिदूर कक्ष में खो तो नहीं रहे थे जिन्होंने अपने विराट प्रयत्न से योग की दुर्लभ सिद्धियों को अत्यल्प काल में ही करतलगत कर लिया था, वे अब दूर क्यों होने लगे वह कौन-सी तपस्या थी जिसे वे लोगों के संपर्क में रहते हुये नहीं कर सकते थे फिर लोगों की यह धारणा भी थी कि श्री अरविन्द का योग एक विश्वयोग है, संसार से पराङ्मुखता का योग नहीं।

भौतिक परिमंडल में यह अधिमानसी आनंद चेतना का पदार्पण था। श्रीकृष्ण इसी चेतना के अवतार थे। आज वही चेतना श्री अरविन्द के भौतिक विग्रह में प्रकट हुई। अतिमानस के जड़तत्व में प्रवेश का मार्ग इससे खुल गया।

भागवत संकल्प के इस योग की अपनी महिमा थी। इसमें प्रकृति की दिव्य चरितार्थता थी, मानव के उच्चतम स्वप्नों की संसिद्धि भी थी, लेकिन लोग जो अपनी पूर्वार्जित धारणाओं से बंधे थे, उनके लिये यह एक अचिंत्य बात थी। संसार नहीं जानता था लेकिन वे तो संसार की ही मंगल साधना में तल्लीन थे-

"The world unknowing for the world he stood."

श्री अरविन्द की यात्रा मात्र चेतना की यात्रा ना थी। जीवन में सांस्थानिक परिवर्तन की विराट् योजना उनके उद्देश्य में शामिल हो चुकी थी। दिव्य चेतना के उच्चतम शिखरों का उनका आरोहण कब का समाप्त हो चुका था। सन् 1920 ई. में ही बारीन को लिखे

पत्र में उन्होंने लिखा था कि उनका काम था चेतना की उच्चतम भूमिका में-अतिमानस में-मन, प्राण और शरीर तक को उठा ले जाने का। परंतु उसकी उपलब्धि आसान नहीं है। 1915 के बाद अभी मैं अतिमानस के तीन स्तरों में सबसे निचले स्तर तक उठने की चेष्टा कर रहा हूँ और अपनी सारी गतियों को उस स्तर तक उठा ले जाने के लिये प्रयत्नशील हूँ। फिर प्रकाश के अवतरण की चर्चा दूसरे स्थल पर उन्होंने इस प्रकार की थी, "जड़तत्व के ऊपर के स्तरों में सत्य और प्रकाश को उतार लाने में कठिनाई है। इसके लिये प्रकृति के कुछ वर्तमान नियमों में परिवर्तन की आवश्यकता है। पहले तो वायुमंडल को बदलना होगा। शक्ति या ज्ञान को प्राप्त कर लेने का यह सवाल नहीं है बल्कि यह सवाल है जड़तत्व में सत्य को उतार लाने का।"

सन् 1926 ई. के अगस्त के बाद अवतरण की चर्चा और आशा से आश्रम का वायुमंडल गंभीर होने लगा था। सभी इस बात को समझ रहे थे कि वे एक विशेष अवतरण की प्रतीक्षा और चेष्टा में हैं। अतिमानसी सिद्धि के लिये यह आवश्यक था। मनोमय चेतना और अतिमानस के बीच उस मध्यस्थ चेतना की चर्चा भी वे करते ही थे जिसका नाम उन्होंने 'अधिमानस' दिया था। यही वह चेतना है जो देवों की उद्गम भूमि है; सृजन शक्ति अनेक धाराओं में यहीं से चलती है। संसार अब तक जो कुछ भी है और इसकी जो कुछ भी ऊँची-से-ऊँची संभावनाएं हैं, वे सब इसी चेतना से अधिशासित और सृष्ट हैं। एक सत्य नाना शक्तियों में, नाना रूपों में यहीं दिखायी पड़ता अथवा अनुभूत होता है-वेदों में वर्णित-एकं सद्भिप्राः बहुधा वदन्ति-के अनुभव की यही अपनी भूमि है।

आखिर 24 नवम्बर का दिन आया। श्रीमाँ तो इस अवसर की प्रतीक्षा में थीं ही, लोग भी अपनी व्यक्तिगत अनुभूतियों के आधार पर एक विशेष अवतरण की

प्रतीक्षा में थे। नवम्बर के प्रारंभ से ही वायुमंडल में एक विशेष ताप का अनुभव सभी कर रहे थे, आज सूर्यास्त प्रायः हो चुका था। लोग अपने-अपने कामों में लगे थे, बहुत-से बाहर समुद्र की ओर टहलने चले गये थे। इसी समय श्री माताजी ने लोगों को बुलावा भेजा। थोड़ी ही देर में सभी आ गये। बरामदे में श्री अरविन्द की कुर्सी के पीछे तीन सर्पाकार दानवों का चीनी चित्र काले पर्दे पर लटक रहा था। आज इस चित्र का विशेष अर्थ था। चीन में एक भविष्योक्ति है कि मन, अंतरिक्ष और पृथ्वी के तीन दानव जब मिलेंगे, तभी सत्य पृथ्वी पर उद्घाटित होगा। आज इस चित्र की सार्थकता थी।

वायुमंडल एक विचित्र शांति से ओतप्रोत था। लोग अपने माथे पर एक ताप का अनुभव कर रहे थे। हवा में एक शक्ति, एक गंभीरता व्याप्त थी। इसी बीच दरवाजे से श्री अरविन्द का इशारा पा माताजी आगे आयीं, पीछे श्री अरविन्द कुर्सी पर बैठे। करीब पैंतालीस मिनट तक गंभीर ध्यान चलता रहा। उसके बाद एक-एक कर साधक श्री माताजी को प्रणाम करने लगे। श्रीमाँ के साथ ही श्री अरविन्द के वरद हस्त का आशीर्वाद भी उन्हें मिलने लगा। इस प्रकार आशीर्वाद की समाप्ति के बाद भी ध्यान का एक संक्षिप्त क्रम चला। वातावरण वर्णनातीत था। कुछ साधकों का चुपचाप चलने वाला यह आत्म-निवेदन, श्री अरविन्द और माताजी की यह मुद्रा, दिव्य प्रेम और करुणा की धारा में साधकों का यह तीर्थ-स्थान पार्थिव रंगमंच के बृहद् कोलाहल में एक वैसी घटना थी जिसकी लघुकाया जीवन के प्राचीनमूल में क्षीण अरुण रेखा के सामान ही प्रकट हुई। परंतु दिङ्मंडल में व्याप्त महांधकार के नाश का इसमें संकेत था; नये सूर्योदय की यह सूचना थी। दत्ता, एक पश्चिम देशीय साधिका अभिभूत हो उठीं। वे बोलीं, 'आज भगवान् पृथ्वी पर प्रकट हुये हैं।'

भौतिक परिमंडल में यह अधिमानसी आनंद चेतना का पदार्पण था। श्रीकृष्ण इसी चेतना के अवतार थे। आज वही चेतना श्री अरविन्द के भौतिक विग्रह में प्रकट हुई। अतिमानस के जड़तत्व में प्रवेश का मार्ग इससे खुल गया।

आश्रम में यह दिवस भी उसी प्रकार स्मरणीय और पूजित है जिस प्रकार श्री अरविन्द का जन्मदिवस अथवा माताजी का जन्मदिवस। जड़ आधार में अधिमानस के निबद्ध हो जाने से निर्धारित दिशा में एक महत्वपूर्ण पग उठा लिया गया था; अतिमानसी सिद्धि का सुनहला श्रृंग दिखलायी पड़ रहा था; किंतु लंबी राह अपने प्रसार में अब अधिक स्पष्ट थी।

आश्रम में अब तक थोड़े-से लोग थे। उनकी संख्या 15 के आसपास थी। इतने थोड़े लोगों को अपने गरुड़ पंख पर उठाकर माँ जिन लोकों का भ्रमण कर रही थीं उनका आभास तत्कालीन साधकों के नित्य नये अनुभवों में प्रकट था। आश्रम के इतिहास का वह चमत्कारों से भरा हुआ काल था। देवगण अति समीप थे। अधिमानसी देव-शक्तियों के साथ संपर्क का सूत्र टूट था। आश्रम के वायुमंडल में नये अनुभवों की अविराम वर्षा हो रही थी। लगता था नयी सृष्टि अति समीप है। स्वर्ण-युग की अगवानी के लिये सभी उद्विग्न थे। श्रीमाँ को अभी सृष्टि का संकेत भी मिल गया। पृथ्वी पर देवलोक प्रकट ही होने वाला था। उन्होंने देखा एक नयी सृष्टि की रचना हो चुकी है जो पार्थिव मंच पर उतरने ही वाली है। मृत्युधाम की कटु झंकार के पीछे माँ संगीत की जिस उमड़ती धारा को सुन रही थीं, वह देवों की वीणा से निकली थी। कितनी सुंदर थी यह रचना!

श्री अरविन्द को माताजी ने यह सारी बात कह सुनायी। वे चुपचाप सुनते रहे। और अंत में कहा, "लेकिन यह तो देवों की रचना है।"

हमें स्मरण है बारीन को लिखे अपने खत में श्रीअरविन्द ने कहा था कि वे पार्थिव जीवन के मंदिर में 'हनुमान' को नहीं, स्वयं 'राम' को प्रतिष्ठित देखना चाहते हैं। वह सतयुग जिसे देव-शक्तियों ने रचा था, श्री अरविन्द के लिये काम्य नहीं था।

श्रीमाँ अपने कमरे में लौट आयीं। वह सारी रचना तोड़ डाली गयी। साधकों का देवशक्तियों के साथ का संबंध-सूत्र माताजी ने काट दिया। और इस घटना के साथ ही आश्रम के इतिहास में एक नया युग शुरू हुआ।

अब साधकों की अंतश्चेतना नंदन-कानन से आती हुयी परिमलवाही के स्पर्श से शीतल और उत्फुल्ल ना थी। झूलसाने वाली हवा बह रही थी, खिड़की विपरीत दिशा में खुली थी। योग-शक्ति ने नया मोड़ ले लिया था।

लोगों की संख्या कुछ बढ़ चली। योग-शक्ति का दबाव अब सामूहिक अवचेतना तथा निश्चेतना पर बढ़ रहा था। साथ ही बढ़ने लगा उस अंधगर्भ में सोयी शक्तियों का कोलाहल, प्रकाश के प्रति उनका विरोध और उद्वेग।

परंतु पाताल-प्रवेश उनके योग की पहली शर्त थी। श्री अरविन्द ने पहले भी प्रकाश को लाने की चेष्टा की थी। परंतु नींव गहरी ना थी; ज्योति लौट गयी!

"...the lights could not stay

The roots were not deep enough."



पैसा एक अभिशाप-पैसा एक वरदान!

श्रीमाँ

पैसा रखना एक विपत्ति है। यह तुम्हें मूर्ख बनाता है, यह तुम्हें कंजूस बनाता है, यह तुम्हें दुष्ट बनाता है। यह दुनिया की सबसे भयंकर विपत्तियों में से एक है। पैसा एक ऐसी चीज़ है जिसे तब तक नहीं छूना चाहिये जब तक व्यक्ति पूर्णतया कामना-मुक्त ना हो जाये। जब व्यक्ति के पास कोई इच्छा ना रहे, कोई आसक्ति ना हो, जब उसकी चेतना पृथ्वी जैसी विशाल हो जाये, तब वह पृथ्वी की समूची सम्पत्ति के बराबर पैसा रख सकता है; तब वह प्रत्येक के लिये बहुत अच्छी बात होगी। लेकिन यदि व्यक्ति ऐसा नहीं बन पाया तो उसके पास का सारा पैसा उसके लिये अभिशाप जैसा है। मैं इस बात को किसी भी व्यक्ति के मुँह पर कह सकती हूँ, उस व्यक्ति से भी जो ऐसा सोचता है कि धनी बनना एक योग्यता है। यह एक विपत्ति है और शायद एक अपमान है, अर्थात् यह भगवान के असंतुष्ट होने की एक अभिव्यक्ति है।

अतएव सर्व प्रथम चीज़ जो पैसेवाले व्यक्ति को करनी है वह है पैसे का हस्तान्तरण करना। लेकिन जैसा कि कहा जाता है, इसे बिना परख के नहीं दिया जाना चाहिये, दानियों की तरह जाकर इसे ना बाँटने लग जाओ क्योंकि ऐसी चीज़ इन दाताओं के मन को अपनी झूठी भलमनसाहत, दयालुता और अपनी महत्ता के अहसास से भर देती है। तुम्हें एक सात्विक भावना के साथ कार्य करना चाहिये, तात्पर्य यह कि इस पैसे का सर्वोत्तम ढंग से सदुपयोग किया जाना चाहिये। और इसीलिये प्रत्येक को अपनी सर्वोच्च चेतना के माध्यम द्वारा यह स्वयं निर्णय लेना आवश्यक

है कि उसके लिये अपने पैसे का सर्वोत्तम उपयोग क्या हो सकता है? यह बिल्कुल ठीक बात है कि जब तक पैसे का लेन-देन ना हो, उसका कोई मूल्य नहीं होता। प्रत्येक के लिये पैसे का मूल्य तभी होता है जब वह उसे व्यय कर देता है। धन एक शक्ति है इसे मैं तुम्हें एक बार बता भी चुकी हूँ प्रकृति की एक शक्ति...

इस शक्ति को उन लोगों के हाथ में होना चाहिये जो जानते हैं कि इस शक्ति का सर्वोत्तम यथायोग्य उपयोग किस प्रकार किया जा सकता है अर्थात् जैसा कि मैंने आरम्भ में बताया, उन लोगों के हाथ में जिन्होंने अपने अन्दर से उसके प्रति अपनी व्यक्तिगत लालसा और हर आसक्ति को मिटा दिया है या किसी प्रकार से इनसे मुक्ति पा ली है।

इसके साथ ही एक ऐसी व्यापक दृष्टि भी जुड़ जानी चाहिये जो धरती की आवश्यकताओं को समझने में सक्षम हो, एक ऐसा ज्ञान जो यह जानने के लिये परिपूर्ण हो कि इन सारी आवश्यकताओं को कैसे संगठित किया जा सकता है और इस शक्ति का इन साधनों द्वारा कैसे उपयोग किया जा सकता है?

यदि कहीं, इसके साथ ही, ऐसे लोगों में उच्चतर आध्यात्मिक ज्ञान भी हो तो वे इस शक्ति का उपयोग इस धरती पर धीरे-धीरे एक ऐसी चीज़ के निर्माण में कर सकते हैं जो परम भागवत्-शक्ति-संबल और भगवान् की करुणा की अभिव्यक्ति करने में सक्षम होगी और तब पैसे, धन व वित्त की यह शक्ति, जिसके बारे में अभी मैंने यह बताया कि वह अभिशाप तुल्य है, सभी के कल्याण हेतु परम आशीर्वाद बन जायेगी।



ओम कान्फ्रेन्स (The all us Meet)

रिपोर्ट-डॉ० अंजू खन्ना
हिन्दी अनुवाद-रूपा गुप्ता

बोस्टन, अगस्त 2017-एमहर्सट कॉलिज कैम्पस में 'द ऑल अस मीट' (The All Us Meet) ने 'फारवर्ड टू द फ्यूचर' (Forward to the Future) पर एक कान्फ्रेन्स आयोजित की। इसमें तारा दीदी 'गेस्ट ऑफ ऑनर' और डॉ० अंजू खन्ना एक संसाधन व्यक्ति के रूप में आमन्त्रित किये गये थे। कान्फ्रेन्स में अधिकतर श्री अरविन्द और श्रीमाँ के भक्त सम्मिलित



ओम कान्फ्रेन्स एमहर्सट अमेरिका

थे। साथ ही यह नये सहयात्रियों को श्री अरविन्द के सम्पूर्ण योग से परिचित कराने का एक सार्थक प्रयास था। कान्फ्रेन्स का मुख्य उद्देश्य लोगों को आपस में जोड़ना, प्रेरित करना और नये भविष्य की ओर कर्म करने के लिये प्रोत्साहित करना था।

तारा दीदी ने पुडुचेरी आश्रम में उनके माँ के साथ बड़े होने, सीखने और उनका समय श्रीमाँ के साथ कैसे बीता इस पर उनके अनुभव जानने के लिये किये गये प्रश्नों के उत्तर से सभी अलग-अलग वर्गों के लोगों को एकता के सूत्र में बाँध दिया। उन्होंने उन्हें दिल्ली आश्रम

की उस कार्ययोजना के बारे में भी विस्तार से बताया जो श्रीमाँ ने श्री अरविन्द आश्रम, दिल्ली शाखा के पुडुचेरी की एकमात्र पूर्ण शाखा के रूप में आरम्भ होने पर मानित किया था। तारा दीदी ने अपने विशिष्ट सरल और सहज तरीके से अनेक लोगों को इस सूर्योलोकि पथ पर चलने और भविष्य के कार्य विस्तार के सन्दर्भ में प्रोत्साहित किया। अंजू दीदी ने 'भविष्य की ओर प्रस्थान' (Forward to the Future) के सन्दर्भ में सम्पूर्ण योग पर एक सत्र लिया। उन्होंने हम सबके द्वारा विशिष्ट स्वैच्छिक कार्य सेवा के अन्तर्गत दिल्ली आश्रम, वन निवास, केचला और मधुबन में हो रहे कार्य पर प्रकाश डालते हुये विशेष रूप से मधुबन में हो रहे आश्रम के कार्य के बारे में विस्तार से बताया। भुवाना नंदकुमार ने छोटी से छोटी बात का भी ध्यान रखते हुये हम सबके मिलने में सहयोग दिया और अमित ठक्कर



एमहर्सट कॉलिज- तारा दीदी, मैथ्यू व कार्नी एन्ड्र्यू

व उनके परिवार ने भी बहुत प्रेम व सौजन्य से हमारा ध्यान रखा।

'ओम' कान्फ्रेंस में तारा दीदी व अंजू खन्ना की उपस्थिति ने दिल्ली आश्रम और पाश्चात्य अनुयायियों के बीच विचारों व भावनाओं के आदान-प्रदान द्वारा पूर्व और पश्चिम को जोड़ने वाली सुनहरी कड़ी को और मजबूती प्रदान की है। यूएसए से भारत वापस आते हुये तारा दीदी और अंजू दीदी सभी संभावित अवसरों, समय और साधनों का लाभ उठाते हुये अधिकतम लोगों से मिलने के उद्देश्य से लंदन में रुके। उन्होंने लंदन में स्थापित दो श्री अरविंद संस्थान के लोगों से सम्पर्क किया। तारा दीदी के साथ विशेष बातचीत के लिये दोनों केन्द्रों ने अनेक व्यक्तियों को आमन्त्रित किया हुआ था।

लंदन यात्रा का मुख्य आधार स्तम्भ सभी भक्तों का प्रेमपूर्ण और सहयोगी व्यवहार था, विशेषतया सुश्री विलास पटेल जिन्होंने अपने सरल स्वाभाविक रूप

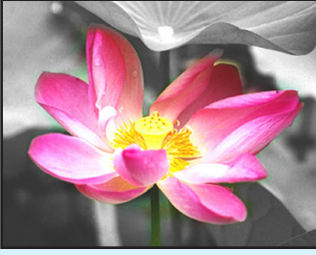
में अत्यन्त कुशलता से सभी कार्यक्रमों का संयोजन किया। उन्होंने हमें ऐसे अनेक लोगों से जोड़ा जिन्होंने अपने हृदय और घर हमारे लिये खोल दिये।

दक्ष, सुभाष ठाकुर, नीला, नवीन कुन्टावाला, उषा, दीपक मियंगर, देवयानी, उल्लास मिश्रा, रमेश पटेल और अन्य बहुत से साधक जो लम्बी यात्रा करके लंदन के दोनों केन्द्रों में हमसे मिलने आये थे, सबने हमारा बहुत ध्यान रखा।

सुश्री सुनन्या पांडा, जिन्होंने लंदन में श्री अरविन्द के बचपन पर काफी शोध किया है, हमें लंदन में श्री अरविन्द के निवास स्थान और सेंट पॉल चर्च ले गयीं।

इन स्थानों को देखना पूरे ट्रिप का एक अतिरिक्त अत्यन्त बहुमूल्य और प्रेरणादायक भाग था।





भगवान के प्रति समर्पण

श्री माँ

जिसने अपने आपको भगवान के प्रति सौंप दिया है, उसके लिए अब इसके अतिरिक्त और कोई कर्तव्य नहीं रह जाता कि वह अपने इस समर्पण को अधिकाधिक सर्वांगपूर्ण बनाता जाये। इस संसार ने और इसमें रहने वाले लोगों ने सदा मानव-सामाजिक और पारिवारिक-कर्तव्य को उस कर्तव्य की अपेक्षा पहला स्थान देना चाहा है जो कर्तव्य उनका भगवान के प्रति है और जिस कर्तव्य को वे अहंभाव को या स्वार्थ का नाम देकर कलंकित करते हैं। और सचमुच उनका फैसला इसके सिवाय और कुछ हो भी क्या सकता था, जिन्हें भगवान की वास्तविकता का कोई अनुभव नहीं है। परन्तु भगवान की दृष्टि में उनकी सम्मति का कोई मूल्य नहीं, उनकी इच्छा में कोई बल नहीं। ये केवल अज्ञान की गतियाँ हैं, इससे अधिक कुछ नहीं। इन लोगों को प्रतीति करा देने का तुम्हें प्रयास नहीं करना चाहिये; और सबसे बढ़कर यह है कि इनकी बातों से तुम्हें प्रभावान्वित या विचलित नहीं होना चाहिये। तुम्हें अपने आपको अपने समर्पण के धवल दुर्ग के भीतर सावधानी के साथ बन्द रखना चाहिये और अपने सहाय, संरक्षण, मार्गदर्शन और अनुमोदन के लिये एक एकमात्र भगवान को ही जोहना चाहिये। जिसको यह मालूम है कि उसे भगवान का अनुमोदन और सहारा प्राप्त है, फिर उसकी यदि सारी की सारी दुनिया निन्दा करती रहे, तो वह इसकी क्या परवाह करता है?



गीतांजलि

रविन्द्रनाथ टैगोर

तुझसे मिलने को मैं अकेला

तुझसे मिलने को मैं अकेला बाहर आया था ।
जाने वह कौन है, जो सुनसान अँधेरे में मेरे
साथ चलने लगा ?
उससे दूर हटने का मैंने बहुत प्रयत्न किया,
टेढ़े-तिरछे रास्ते पर भी चला;
कई बार ऐसा प्रतीत हुआ कि आपदा टल गई ,
किन्तु फिर वह दिख गया ।
वह पृथ्वी पर धूल उड़ाता जाता है,
विलक्षण चंचलता है उसमें !
मेरे हर शब्द में वह अपना स्वर मिला देता है ;
वह मेरा अहं ही तो है, प्रभु !
वह तो निपट निर्लज्ज है ;
उसके साथ तेरे द्वार तक आते मुझे लाज आती है ।
तुझसे मिलने को मैं अकेला ही बाहर आया था ।

अब उसका अवलंब नहीं छोड़ना

अब उसका अवलंब नहीं छोड़ना,
दृढ़ता से पकड़े रहना
अंधकार फिर छँट जायेगा अरे, अब भय नहीं
जय, तेरी जय होगी ।
वह देख, पूर्व दिशा के मस्तक पर, निविड़ द्रुमों के
पीछे
शुक्र तारा निकल आया, अब भय नहीं ।
निराशा, आलस, संशय-ये रात के सहचर हैं,
प्रभात के नहीं,
अपने पर ही उनका भरोसा नहीं
आ, दौड़कर आ ! बाहर आ ! ध्यान से देख !
आँख उठाकर देख,
आकाश तेज-पुंज हो रहा है ।
अरे, अब भय नहीं है-
जय, तेरी जय होगी !



भगत रविदास

सुरेन्द्रनाथ जौहर

‘जात कसे पूछणि नहियों
औत्थे अमलांते होंगगे नवेड़े।’

(वहाँ जाति नहीं पूछी जायेगी वहाँ तो फैसला इस
बात पर होगा कि जिन्दगी में क्या किया।)

कहानी इस प्रकार है कि भगत रविदास आगरा के समीप दासपुर गाँव में एक गरीब चमार के घर पैदा हुआ और खूब शिक्षा पायी, पर आज कल के स्कूल-कॉलेजों जैसी नहीं। बचपन से ही जूते मरम्मत करना सीखा। अभी उसकी ग्यारह-बारह बरस की आयु थी कि पिता ने चार जोड़ी जूते दिये और कहा कि बाजार में दो-दो रुपये में बेच आओ। जब रविदास वापिस आया तो केवल छह रुपये लेकर आया। पिता ने पूछा-“चौथे जूते का क्या हुआ?” रविदास कहने लगा-“एक बहुत गरीब आदमी था, उसको एक जोड़ा मुफ्त में दे दिया।” पिता ने दो चाँटे टिकाये। पिता के दिल में तो बेटे का दर्द था, उन्होंने उसे ज्यादा नहीं मारा, पर बड़ा भाई, जो पास ही खड़ा था, उसने तो रविदास की अच्छी-खासी मरम्मत कर दी। रविदास सह गया, बेचारा कर ही क्या सकता था।

दो-तीन साल के बाद रविदास कुछ और बड़ा हुआ तो उसको छः जोड़ी जूते दिये गये और कहा गया कि दो-दो रुपये में बेच आओ। उन्हें बेचकर वह फिर केवल नौ रुपये लाया। पिता ने फिर पूछा तो जवाब दिया कि तीन जूते तो मैंने दो-दो रुपये में बेचे और तीन जूते एक-एक रुपये में, क्योंकि लोग गरीब थे और उनके पास अधिक पैसे नहीं थे। रविदास की फिर मरम्मत हुई और फैसला हुआ कि उसको अलग कर दिया जाये और घर से निकाल दिया जाये

अब उसकी उम्र सोलह साल की हो चुकी थी और शादी भी हो गई थी। रविदास को छः रुपये की धन राशि देकर घर से निकाल दिया गया। उसको जूते बनाने का कुछ सामान, एक सुआ और एक रापी भी दी गयी। बेसहारा रविदास अपनी स्त्री को लेकर, दूर गाँव के बाहर एक कूड़े-करकट के ढेर के पास झोंपड़ी बनाकर रहने लगा और जूते मरम्मत करने और जूते बनाने का काम करने लगा। गाँव के और दूर-दूर के सब लोग उसी से आकर जूते बनवाया करते थे।

ऊपर विष्णु भगवान के दरबार तक यह खबर पहुँची। उन्होंने देखा कि ऐसा भगत, जो हर समय राम-राम करता है, दरिद्र अवस्था में है और बदबूदार जगह पर बैठा है। भगवान् एक ब्राह्मण का रूप धारण करके, माथे पर टीका लगाकर, रविदास के पास पहुँचे। रविदास ने दूर से प्रणाम किया, क्योंकि वह अच्छूत चमार था, ब्राह्मण के पाँव तो छू नहीं सकता था।

ब्राह्मण ने कहा-“मैं भगवान् का दूत हूँ। मुझे भगवान् ने तुम्हारी दशा देखने को भेजा है और अब मैं वापिस जाकर भगवान् को पूरी रिपोर्ट दूँगा।” रविदास ने कहा-“आपकी बहुत-बहुत कृपा महाराज! मैं तो आनन्द में हूँ।”

कुछ समय बाद वह ब्राह्मण फिर श्वेत वस्त्रों में आये और कहा-“भगवान् ने आपके लिये, यह एक छोटा-सा पारस पत्थर भेजा है। यह पत्थर, जिस किसी लोहे के टुकड़े को छूयेगा, वह सोना हो जायेगा। वह सोना बेचकर, पहले अपने रहने के लिये अच्छा-सा मकान बना लेना और जरूरत की सब चीजें फर्नीचर, रसोई के बर्तन, पहनने के कपड़े आदि खरीद लेना। उसके

बाद शेष रुपये भगवान् के काम में लगाना-धर्मशाला, सराय, स्कूल, कॉलिज, अस्पताल आदि खोलना और धीरे-धीरे एक यूनिवर्सिटी भी बनाना। आप भगवान् के भक्त हैं, भगवान् को आप पर पूरा विश्वास है कि आप रुपये का गलत इस्तेमाल नहीं करेंगे।" रविदास ने कहा-"मैं अच्छूत हूँ, मेरे हाथ चमड़े से गंदे हैं। मैं आपके हाथ से, इन गंदे हाथों में पारस नहीं ले सकता। आप एक कपड़े में बाँध कर इसे झोपड़ी की छत में फँसा दीजिये। जब मुझे समय मिलेगा, मैं नहा धोकर इसे निकाल लूँगा।"

दस वर्ष बीत गये। भगवान् फिर ब्राह्मण के रूप में नीचे आये, यह देखने के लिये कि रविदास ने क्या-क्या बनवाया है और वह किस अवस्था में रहता है? उन्होंने देखा कि रविदास उसी पुरानी स्थिति में बैठा जूते गाँठ रहा है और गुनगुनाता जा रहा है-

"अब कैसे छुट्टे नाम रट लगी प्रभु जी, तुम चन्दन हम पानी, जाकी अंग-अंग बास समानी"।

ज़रा सी भी तब्दीली नहीं हुई, यह देखकर ब्राह्मण हैरान हुआ और उसे क्रोध भी आया।

रविदास कहने लगा, "मैं तो अपने काम और भक्ति में भूल ही गया। आप देखिये कि पारस छप्पर में है कि नहीं?" ब्राह्मण ने देखा कि पारस ज्यों का त्यों छप्पर में रखा है। ब्राह्मण ने छप्पर में से पारस निकाल कर रविदास को फिर से देना चाहा तो रविदास ने कहा-"मुझे इसकी आवश्यकता नहीं है। मैं इसका क्या करूँगा?" ब्राह्मण बहुत हैरान हुआ। रविदास ने रापी अपने पसीने वाले माथे पर रगड़ी तो रापी सोने की तरह चमकने लगी। उसने वह रापी उसी वक्त कुएँ में फेंक दी और दूसरी रापी से काम करने लगा।

ब्राह्मण ने जाकर, भगवान् के दरबार में सारी रिपोर्ट दी कि रविदास तो इस तरह का भगत है। भगवान् ने कहा-"पारस को पारस की क्या जरूरत है? रविदास जिसको छुयेगा, वह अपने आप सोना हो जायेगा।"



बुरा ना मानो

ज्ञानवती गुप्ता

राधा और उसकी तीन-चार सहेलियाँ साथ में हैं। सब दादी माँ से मिलने आयी हैं। दादी माँ ने देखते ही प्यार से कहा- आओ, आओ बैठो। बहुत अच्छा हुआ तुम लोग आ गयीं। मैं याद ही कर रही थी कि राधा की सहेलियों को नहीं देखा बहुत दिनों से।

सुलभा-मन तो बहुत बार करता है आने को पर स्कूल की पढ़ाई से समय ही नहीं मिल पाता। इस बार हमारी बोर्ड की परीक्षा है ना! बस, खाली घंटे में राधा से आपकी बातें सुनकर संतोष कर

लेना पड़ता है। आज हमारा कुछ वाद-विवाद चल पड़ा था तो सोचा चल कर दादी माँ से पूछें, उनसे सही उत्तर मिलेगा।

दादी माँ-चलो इसी बहाने सही, तुम लोग आयीं तो।

शारदा-दादी माँ, सभी कहते हैं कि किसी को कष्ट ना पहुँचाओ। किसी की परेशानी का कारण मत बनो पर अगर कोई हमें कष्ट पहुँचाये?

दादी माँ- तब तुम कष्ट ना मानो (हँसती हैं)। बड़ी सीधी सी बात है।

शारदा- मानने या ना मानने का प्रश्न ही पैदा नहीं होता, वह तो बुरा लग ही जाता है और मन बहुत खराब हो जाता है, किसी काम में नहीं लगता जब तक दो चार से कह ना लो दिल की भड़ास नहीं निकलती और पढ़ाई में मन ना लगकर बार-बार उसी चीज पर

जाता है कि उसने ऐसा कहा क्यों? ऐसा व्यवहार किया क्यों?

दादी माँ- तेरी बात बिल्कुल ठीक है बेटी, किसी को अप्रिय बात या व्यवहार का बुरा ना लगे, हम इसकी अवहेलना कर सकें यह काफी मुश्किल काम है। अगर ऐसा कर सकें तो शायद जीवन में तीन-चौथाई दुःख तो निकल ही जायेंगे और जब ऐसी समता की स्थिति प्राप्त हो जायेगी तो बाकी एक चौथाई दुःखों को भी आसानी से जीता जा सकेगा।

“अगर हमारी सचमुच में कोई भूल है जिसके लिये हमें वह अप्रिय व्यवहार मिला है तो हमें वह भूल ठीक कर लेनी चाहिये और अगर हमारी भूल नहीं है, कहनेवाले ने गलत बात कही है, तो यह उसकी भूल है कि उसने गलत बात कही। उसकी गलती के लिये हमें दुःखी क्यों होना चाहिये ?

मुझे श्रीमाँ की एक बात याद आ रही है। उन्होंने ऐसे ही किसी प्रश्न के उत्तर में आश्रम के बच्चों से कहा था, “अगर हमारी सचमुच में कोई भूल है जिसके लिये हमें वह अप्रिय व्यवहार मिला है तो हमें वह भूल ठीक कर लेनी चाहिये और अगर हमारी भूल नहीं है, कहनेवाले ने गलत

बात कही है, तो यह उसकी भूल है कि उसने गलत बात कही। उसकी गलती के लिये हमें दुःखी क्यों होना चाहिये ? उसने गलत बात की है तो दुःख तो उसको ही होना चाहिये। ठीक है ना ! ”

शारदा-(सोचते हुये) ठीक तो है।

दादी माँ-"और श्रीमाँ कहती हैं कि यह तथ्य तो जब मैं बारह वर्ष की थी मैंने तभी जान लिया था अतः मुझे दुःख नहीं होता था। स्थिति पर भली प्रकार विचार

करके उससे जो सीखना है, सीख कर व्यर्थ की बात को मन से निकाल दो।"

राधा- बड़े पते की बात कहती हैं श्रीमाँ ! दादी माँ, हमें तो बिलकुल ही निरुत्तर कर देती हैं। हम चाहें कह लें कि ऐसा करना काफी...काफी...कठिन है पर अब इसके आगे कोई तर्क नहीं रह जाता। दूसरे की भूल

पर हम अपना मन खराब क्यों करें ? अप्रिय व्यवहार उसने किया है, यह उसकी भूल है ...कितना सच है... काश ! यह हो सके।

दादी माँ- इस बात को स्मरण रखते हुये यदि हम प्रयास करेंगे तो एक दिन हम भी इसमें अवश्य सफल होंगे।



अचंचलता नीरवता

अचंचल और नीरव होना सीखो। जब तुम्हारे सामने हल करने के लिये कोई समस्या मौजूद हो तो तुम यदि सभी संभावनाओं, सभी परिणामों, करणीय या अकरणीय सभी बातों के विषय में अपने मस्तिष्क के अन्दर उधेड़बुन करने के बदले शान्त-स्थिर बने रहो, सदिच्छा बनाये रखने की अभीप्सा करो, सदिच्छा पाने की आवश्यकता महसूस करो तो समस्या का समाधान शीघ्र आ उपस्थित होगा और नीरव बने रहने के कारण तुम उसे आसानी से सुन सकोगे।

जब कभी तुम किसी कठिनाई में पड़ो, इस पद्धति से काम करने की कोशिश करो। चंचल होने के बदले शान्त-स्थिर बने रहो और अपने स्वभाव के अनुसार, खूब उत्साह या शान्ति के साथ, तीव्रता या विस्तार के साथ अथवा इन सभी चीज़ों के साथ दिव्य ज्योति को पुकारो और उसके आने की प्रतीक्षा करो।

तब तुम्हारा काम कुछ छोटा हो जायेगा।

श्रीमाँ

प्रेम

प्रेम की गति मनुष्यों तक ही परिमित नहीं है और सम्भवतः मानव-जाति की अपेक्षा अन्य सृष्टियों में कम विकृत है। पुष्पों और वृक्षों को देखो। जब सूर्य अस्त होता है और सब कुछ नीरव हो जाता है, तब क्षण भर के लिये बैठो और अपने-आपको प्रकृति के साथ एक कर दो।

तुम अनुभव करोगे कि पृथ्वी से, वृक्षों की जड़ के नीचे से प्रगाढ़ प्रेम और कामना से पूर्ण एक अभीप्सा ऊपर उठ रही है और यह अभीप्सा ऊपर की ओर बढ़ती हुयी तथा वृक्षों के तन्तुओं में से संचार करती हुयी उनकी उच्चतम शाखाओं तक में उठ रही है-उस वस्तु के लिये कामना जो प्रकाश लाती और सुख फैलाती है, उस प्रकाश के लिये जो चला गया है, जिसे वे वापस चाहते हैं। उनमें यह चाह इतनी पवित्र और तीव्र होती है कि यदि तुम वृक्षों में होने वाली गति को अनुभव कर सको तो तुम्हारी अपनी सत्ता भी उस शान्ति, उस प्रकाश और प्रेम के लिये हार्दिक प्रार्थना करने लगेगी जो अभी तक यहाँ अभिव्यक्त नहीं है। एक बार भी यदि तुम इस विशाल, विशुद्ध और सच्चे दिव्य प्रेम के संस्पर्श में आ जाओ, यदि तुम थोड़ी देर के लिये ही इसके लघुतम रूप का अनुभव कर पाओ, तो तुम यह अनुभव कर लोगे कि मनुष्य ने इसके स्वरूप को कितना नीच बना डाला है। मानव प्रकृति में यह क्षुद्र, पाशविक, स्वार्थमय, हिंसक और कुरूप हो गया है, या फिर यह दुर्बल और भावुक, अत्यन्त तुच्छ भावों से भरा हुआ, क्षणभंगुर, बाहरी और शोषक बन गया है। और इस नीचता और पशुता को अथवा स्वार्थ से भरी हुयी दुर्बलता को लोग प्रेम कहते हैं!

श्री मातृवाणी खण्ड 3,



सच्चाई

श्री मातृवाणी

क्या तुम्हें ऐसा नहीं लगता कि सत्य बोलना कितना सुन्दर है, चाहे ऐसा करने में विपत्ति ही क्यों ना उठानी पड़े? और ऐसा प्रायः होता है कि जो लोग इस प्रकार की विपत्ति का सामना करते हैं, उनके लिये अन्त में सब बातें भली हो जाती हैं, यद्यपि आरंभ में ऐसा प्रतीत नहीं होता। असत्य की सफलता सदा अस्थायी होती है, जबकि अधिकतर सत्य कहना ही चतुर बनने का सबसे बढ़िया तरीका है।

एक बार, सवेरे के समय, दिल्ली के बादशाह ने योग्य व्यक्तियों को उपाधियाँ बाँटने के लिये दरबार किया। जब उत्सव समाप्त होने आया तो उसने देखा कि जिन व्यक्तियों को उसने बुलाया था उनमें से सैयद अहमद नामक एक युवक अभी तक नहीं पहुँचा है।

बादशाह पालकी में सवार होने के लिये अपने सिंहासन पर से उठा; इसमें बैठकर वह अपने बड़े महल के एक भाग से दूसरे भाग को जाया करता था।

ठीक उसी समय उस युवक ने उतावली से प्रवेश किया।

तुम्हारा पुत्र देर से पहुँचा है, बादशाह ने सैयद के पिता से, जो उसका मित्र था, कहा, और स्वयं युवक की ओर कड़ी दृष्टि से देखकर प्रश्न किया:

“यह देर क्यों हुई?”

“बादशाह सलामत,” सैयद ने सच्चाई से कहा, “मैं आज बहुत देर तक सोता रहा।”

दरबारी स्तंभित हो युवक की ओर ताकने लगे। किस ढिठाई के साथ यह बादशाह के सामने अपना अपराध स्वीकार कर रहा है? क्या इससे अच्छा बहाना इसके पास नहीं था? कैसी मूर्खतापूर्ण बात कह दी इसने! पर हुआ इसके विपरीत। बादशाह एक क्षण तो सोचता रहा, फिर उसने युवक की उसकी सत्यवादिता के लिये प्रशंसा की और उसे मोतियों की एक माला और सम्मान के चिह्न-स्वरूप, मस्तक पर धारण करने के लिये एक रत्न प्रदान किया।

इस प्रकार सैयद अहमद को, जो सत्य से प्रेम करता था और, बादशाह हो चाहे किसान सबसे सच कहता था, यह प्रतिफल मिला।

यह निश्चित है कि बिना किसी कष्ट

के सत्य बोल सकने के लिये सबसे अच्छा ढंग यह है कि हम अपना व्यवहार सदा इस प्रकार रखें कि हमें अपना कोई भी कार्य छुपाना ना पड़े। इसके लिये प्रतिक्षण हमें यह याद रखना चाहिये कि हम भगवान् के सम्मुख हैं। कारण, वचन की सच्चाई कार्य की सच्चाई की माँग करती है। सच्चा मनुष्य वह है जो अपने वचन और कर्म से सब पाखंड को निकाल देता है।

* * *

शहर “अमरोहे” में एक विशेष प्रकार का बर्तन बनता है जिसे “कागजी” कहते हैं। इस पर रुपहले काम की सजावट होती है। ये बर्तन होते तो हैं सुन्दर, परन्तु इतने हल्के-फुल्के और बोदे कि जरा से प्रयोग

से ही टूट जाते हैं। फिर भी देखने में ये बड़े उपयोगी मालूम देते हैं, पर उन्हें देखकर ही मन को संतुष्ट कर लेना चाहिये।

एक ब्राह्मण ने अपने पुत्र को बनारस में किसी पण्डित से विद्या पाने के लिये भेजा।

बारह वर्ष के बाद वह युवक अपने गाँव लौटा। बहुत-से लोग यह सोच कर कि अब वह एक बड़ा भारी पण्डित हो गया है, उसके घर उससे मिलने के लिये आये। उन्होंने उनके सामने संस्कृत भाषा की एक पुस्तक रखी और उससे कहा : “पूज्य पण्डितजी, इसकी विद्या हमें भी सिखाइये।”

युवक स्थिर दृष्टि से उस पुस्तक की ओर देखता रहा। वास्तव में वह तो उसका एक शब्द भी नहीं समझ पा रहा था। बनारस में उसने सिवाय अक्षरज्ञान के और कुछ नहीं सीखा था। वे अक्षर भी उसके मस्तिष्क में इसलिये धीरे-धीरे प्रवेश पा गये थे कि वे वहाँ खूब बड़े आकार में श्यामपट पर लिखे रहते थे और वह उन्हें प्रतिदिन देखा करता था।

वह चुपचाप पुस्तक के सामने बैठा रहा। उसकी आँखों से ऐसा प्रतीत होने लगा कि बस अब वे बरसने ही वाली हैं।

आगतों ने कहा : “पण्डितजी, अवश्य ही इस पुस्तक की किसी चीज ने आपके हृदय को द्रवित किया है। जो कुछ इसमें है, आप हमें भी बताइये।”

“ये अक्षर बनारस में तो बड़े होते थे, परन्तु यहाँ ये छोटे हैं।” अंत में वह बोला।

क्या यह पण्डित उस कागजी बर्तन के सदृश नहीं था?

बहुत-से व्यक्ति भी इन कागजी बर्तनों के समान होते हैं उनका स्वरूप सुन्दर होता है, पर यदि तुम उन्हें किसी भी बात में कसौटी पर कसने का प्रयत्न करो तो तुम्हें पता लगेगा कि उनके अंदर दिखावे के अतिरिक्त कहीं कुछ नहीं है। उन पर तनिक भी भरोसा ना रखो, क्योंकि उनकी दुर्बलता के लिये वह बहुत भारी बोझ है।

एक भेड़िया गंगा नदी के किनारे चट्टानों पर रहता था। पर्वतों पर बर्फ पिघलने से नदी में बाढ़ आ गयी। एक दिन नदी इतनी चढ़ आयी कि जिस चट्टान पर भेड़िया रहता था उसके चारों ओर पानी-ही-पानी हो गया। उस दिन भेड़िया अपने भोजन की तलाश में ना जा सका। यह देखकर कि आज खाने के लिये कुछ नहीं है, उसने कहा : “अच्छा तो है, आज पवित्र दिन भी है; इसके उपलक्ष्य में आज व्रत रखूँगा।”

वह चट्टान के एक किनारे बैठ गया और व्रत का पवित्र दिन मनाने के लिये उसने अपनी आकृति खूब गंभीर बना ली।

उसी समय एक जंगली बकरी पानी के ऊपर से एक चट्टान पर कूदती हुई उसी स्थान पर आ पहुँची जहाँ भेड़िया खूब भक्ति-भाव में बैठा था। ज्यों ही भेड़िये ने उसे देखा वह एकदम चिल्ला उठा : “ओह, यह रहा कुछ खाने को!”

वह बकरी पर झपटा पर चूक गया। दुबारा झपटा, तब भी वह सफल नहीं हुआ। अंत में बकरी तेज बहती हुई धारा को पार करके पूरी तरह से भेड़िये की पहुँच से बाहर हो गयी।

“बहुत खूब!” भेड़िये ने अपना साधु-भाव फिर से धारण करते हुये कहा : “मैं आज व्रत के दिन बकरी का मांस खाकर अपवित्र नहीं होऊँगा। व्रत के दिन मांस! कदापि नहीं।”

उस भेड़िये, उसकी भक्ति

और व्रत के प्रति उसकी श्रद्धा के बारे में तुम्हारा क्या विचार है? तुम उसके कपट पर हँसते हो। पर कितने ही लोग ऐसे हैं जिनकी सच्चाई भेड़िये की सच्चाई जैसी होती है, जो सुन्दर भावनाओं का प्रदर्शन करते हैं, क्योंकि उसमें उनका स्वार्थ होता है। वे छोटे-छोटे भक्ति-भाव के काम करते हैं क्योंकि वे प्रकट रूप में बुरे कार्य नहीं कर पाते; पर इस सब चालाकी के होते हुये भी, क्या तुम सोचते हो कि ये कपटी सच्चे और न्यायपरायण लोगों के सामने अधिक समय तक टिक सकते हैं?

दक्षिण भारत की एक प्राचीन कथा है। “राजाबेला” नामक एक राजा के बारे में प्रसिद्ध था कि केवल उसकी हंसी मीलों दूर तक के प्रदेश को बेले के फूल की मीठी सुगन्ध से भर देती थी। पर इसके लिये उसकी हंसी का उसके हृदय की आनन्दमयी और स्वाभाविक प्रफुल्लता से निकलना आवश्यक था। यदि वह बिना सच्ची प्रफुल्लता के हंसने का प्रयत्न करता तो उसका कुछ फल नहीं होता। जब उसका हृदय प्रसन्न

रहता तो उसकी हंसी भी एक सुगंधित स्त्रोत के समान फूट पड़ती।

इस हंसी का गुण तो पूर्णतया उसकी सच्चाई में था।

राजा दुर्योधन के महल में भोजनादिका खूब राजसी ठाट-बाट था। सोने-चाँदी के बर्तन थे- लाल, पन्ने और जगमगाते हीरे-जड़े। श्रीकृष्ण को भोजन के लिये निमंत्रण मिला पर वे नहीं गये। उसी संध्या को वे एक गरीब शूद्र के घर भोजन करने चले गये; उसने भी उन्हें आमंत्रित किया था। वहाँ भोजन अत्यन्त सादा था और बर्तन भी अति साधारण, पर कृष्ण ने एक को छोड़कर दूसरे को चुना, क्योंकि शूद्र का अर्पित किया हुआ भोजन सच्चे प्रेम से ओत-प्रोत था, जबकि राजा दुर्योधन के राजसी भोज का आयोजन खाली दिखाने के लिये किया गया था।

ऐसी ही एक कहानी और भी है; प्रतापी राम ने एक बार एक नीच जाति की स्त्री के यहाँ भोजन किया था। वह उनके आगे कुछ फल ही रख सकी थी, क्योंकि उसके पास और कुछ नहीं था। पर उसके पास जो सबसे बढ़िया चीज़ थी वही उसने इतने प्रेमपूर्ण हृदय से उन्हें अर्पित की कि इससे राम का हृदय पुलकित हो गया और उन्होंने यह इच्छा की कि सच्चे हृदय द्वारा दी गयी इस भेंट की स्मृति नष्ट नहीं होनी चाहिये। इसलिये आज भी, कई शताब्दियों के बाद, लोग इसका वर्णन करते हैं।



सावित्री

विमला गुप्ता

प्रभु का गुलाब

जिस प्रकार अश्वपति का योग "सावित्री" महाकाव्य के प्रथम 24 सर्गों को प्रमुखता से समेटे हुए है वैसे ही आगे 25 सर्गों में सावित्री का शौर्यपूर्ण व्यक्तित्व चित्रित हुआ है। और जिस प्रकार अश्वपति के योग के समस्त विवरण अपना सत्य और शक्ति श्री अरविन्द के योग की तपस्या से ग्रहण करते हैं, वैसे ही सावित्री के योग के समस्त चित्रण एवं वर्णन, मृत्यु से उनका संघर्ष और उस पर विजय, माताजी के आन्तरिक जीवन की तपस्या से अपना सत्य और शक्ति ग्रहण करते हैं। एक प्रकार से सावित्री महाकाव्य, अतिमानसिक युग के इन दोनों अग्रदूतों, श्री अरविन्द एवं श्री माताजी के आभ्यन्तर जीवन की महागाथा है। किन्तु साथ ही वह सबके जीवन की भी कथा है, जो बहुत सतर्कता एवं निकटता से मानवी जीवन को संस्पर्श करती है और उसकी विशद व्याख्या करती है। वस्तुतः श्री अरविन्द ने सावित्री सत्यवान के आख्यान द्वारा हम मनुष्यों के अन्तर्बाह्य जीवन की महत्ता का प्रतीकात्मक ढंग से प्रस्तुतीकरण किया है। "सत्यवान" का चरित्र हमारी उस अभीप्सा का प्रतीक है जो अनवरत प्रभु एवं प्रकाश के लिए एवं मुक्ति तथा अमरता के लिए प्रयास करती है जबकि इसके विपरीत हमारा सामान्य जीवन भाग्य, अज्ञान तथा मृत्यु की जकड़न में कसा हुआ है।

"सावित्री" वह "दिव्य कृपा" है जो हमारे जीवन में सत्यवान रूपी इस अभीप्सा को पुनर्जीवित करने के लिए पृथ्वी पर मनुष्य की नियति "दिव्य जीवन" को उपलब्ध करने के लिए अनवरत क्रियाशील है। इस

प्रकार श्री अरविन्द का यह महाकाव्य हमारे अपने जीवन की भी कहानी है।

अपनी पिछली बैठक में हम देवर्षि नारद के उस प्रसंग तक पहुँचे थे, जब वे सावित्री की माता को, सावित्री और उसके भाग्य के बीच आने से मना करते हैं। फिर सावित्री अपने माता-पिता का आशीर्वाद लेकर वापस वनों की पर्णकुटी में चली जाती है और सत्यवान के साथ नया जीवन शुरू करती है। सत्यवान से जुड़ जाने पर उसके जीवन का प्रत्येक क्षण, प्रत्येक स्पन्दन भरपूर आनन्द का क्षण व सुख का स्पन्दन बन जाता है। यद्यपि इस आनन्द की तरह में पूर्वज्ञात भविष्यवाणी की निरन्तर टीसने वाली वह पीड़ा बनी हुई है कि सत्यवान के जीवन के इने-गिने दिन शेष रह गये हैं। सावित्री के हृदय का वह निजी दुःख उसे वैश्विक दुःख की अनुभूति के निकट ले आता है।

बहादुर और कृतसंकल्प, देवी रूपा तो भी मानवी गुणों से युक्त सावित्री असहाय सी उन बारह महीनों को कटते देख रही है जिनका क्षण-क्षण रिसता जा रहा है। अब वह क्या करेगी? कैसे अपनी मानवीय परिसीमाओं से ऊपर उठेगी? क्या हम मानवों के लिए बलवान "भाग्य" से बचना मुश्किल है? और क्या हम अपनी नियति के सदा ही खिलौने बने रहेंगे? क्या वह भी अपने को अपने "भाग्य-लेख" के हवाले कर दे अथवा उसमें ऐसी शक्ति है जो उसे भाग्य के इस क्रूर विधान से अपनी रक्षा के योग्य बना सकें और उस पर विजय दिला सके?

जिस समय सावित्री इन प्रश्नों पर चिन्ता कर रही होती है तो उसे एक अन्तर्वाणी सुनाई देती है :-

"उठ और मृत्यु पर विजय प्राप्त कर।"

इन पंक्तियों में उस वाणी को सुनिये :-

मृत्यु से जकड़ी इस गूँगी धरती पर तू क्यों आई?

इन तटस्थ आकाशों तले, यह ज्ञानजनित मानव-जीवन

एक बलि पशु के समान है जो बँधा हुआ है काल के खम्बे से।

ओ आत्मा! ओ अमर शक्ति!

क्या बेबस हृदय में दुःख को पोषित करने के लिए तू आई है?

क्या नीरस शुष्क आँखों से दुर्भाग्य की प्रतीक्षा के लिए हुआ है तेरा आगमन?

उठ ओ आत्मा! काल और मृत्यु को परास्त कर।

(पर्व 7, सर्ग 2, पृष्ठ 474)

अन्तरात्मा की यही वाणी सावित्री को बताती है कि उसके जीवन का वास्तविक उद्देश्य क्या है :-

पृथ्वी को स्वर्ग के समकक्ष उठने के लिए स्वयं करना होगा अपना रूपान्तर

अथवा स्वर्ग को उतरना होगा पृथ्वी के धरातल पर

और इस विशाल आध्यात्मिक परिवर्तन को सम्भव करने हेतु,

मानव हृदय की "रहस्यमयी गुफा"में वास करती,

स्वर्गिक "चैत्य सत्ता"को उठाने होंगे अपने स्वरूप पर पड़े आवरण,

उसे अपने कदम रखने होंगे साधारण जीवन के संकुल कक्षों में

और अनावरण आना होगा प्रकृति के अग्रभाग में

परिपूर्ण एवं अनुशासित करना होगा, इसके जीवन, शरीर एवं विचारों को।

(पर्व 7, सर्ग 2, पृष्ठ 486-87)

सावित्री का जन्म एक "वैश्विक इच्छा"के फलस्वरूप हुआ था। उसे अज्ञान और मृत्यु पर विजय पाने के लिए जन्म-कक्ष में उतरना पड़ा था ताकि वह पृथ्वी से इनको मिटा सके। अपने अवतरण के हेतु को साधने के लिए उसे जिस तीक्ष्ण समस्या का सामना करना पड़ता है वह है-अपने पति की भाग्य द्वारा निर्धारित पूर्वनियत मृत्यु। अभी तक मनुष्य की कोई भी शक्ति और उसके हृदय, मन, विचार और संकल्प का कोई भी प्रयास इस समस्या का हल ढूँढने में समर्थ नहीं हो पाया है। अतः निश्चय ही इन सबसे परे मनुष्य की वास्तविक शक्ति कहीं और निहित है और वह शक्ति है उसका दिव्य अंश "चैत्य पुरुष" (psychic Being)। अपने अन्तरात्मा के निवासी इस दिव्य अंश को उसे सक्रिय बनाना होगा, अपनी प्रकृति के सामने के अग्रभाग में लाना होगा और उसके द्वारा ही अपने जीवन की प्रत्येक गतिविधि को संचालित एवं नियंत्रित करना होगा। केवल तभी मनुष्य "मृत्यु" और "अज्ञान" पर विजय पा सकता है। इस सच्चाई को जानकर सावित्री अपने अंदर की ओर उन्मुख हो जाती है। यहाँ "आत्मा की खोज" शीर्षक से "सावित्री" के योग का वर्णन हुआ है और करीब सात सर्गों में इसे प्रस्तुत किया गया है जिसमें पर्व सात के लगभग पचास पन्ने हैं।

मूल महाभारत कथा में सावित्री "तिरात्र" व्रत लेती हैं। यह व्रत तीन दिन, तीन रात अपने को शुद्ध करने की तपश्चर्या का व्रत है। और वह सतीत्व की शक्ति को अपने अन्दर जागृत करने का संकल्प करती है। श्री अरविन्द के "सावित्री" महाकाव्य में कथा के इस

प्रसंग को भी विस्तार से प्रतिपादित किया गया है और सावित्री का योग भी बड़े उत्कृष्ट एवं शोभनीय तरीके से विकसित होते दर्शाया गया है तथा अन्तरात्मिक धरातल पर उसका योग पूर्ण विकास को प्राप्त करता है लेकिन सावित्री जो मार्ग चुनती है वह अश्वपति के मार्ग से अलग है।

प्रारम्भ में वह प्राण एवं मन के प्रदेशों से होकर यात्रा करती है। तब वह एक ऐसे क्षेत्र में आती है जहाँ उसकी भेंट तीन मातृरूपा शक्तियों (Three Madonna's) से होती है। ये तीनों प्रभु की वे वैश्विक दिव्य शक्तियाँ हैं जो सदा से ही मनुष्य जीवन में सक्रिय है। उनमें से पहली माता "प्रेम एवं सहानुभूति" की देवी है, दूसरी "शौर्य एवं पराक्रम" की शक्ति है तथा तीसरी "प्रकाश एवं प्रज्ञा" की माता है। ये तीनों दैवी शक्तियाँ सावित्री की "असली माता" होने का दावा करती है। सर्वाधिक ध्यान देने लायक बात यह है कि तीनों ही शक्तियों का एक आसुरिक विकृत रूप भी है जो मानव प्रकृति में अनवरत कार्य कर रहा है वह भी सावित्री से सम्भाषण करता है। सावित्री की इन तीनों वैश्विक शक्तियों एवं उनके विकृत आसुरिक रूपों से भेंट की घटना मानव जीवन के इतिहास का एक और क्षितिज प्रकट कर देती है। विश्व के इतिहास में महान् प्रेममयी और दयालु जीवात्माओं की विद्यमानता सदा बनी रहती है। इन्होंने पृथ्वी से सभी दुःख, क्लेश एवं शोक नष्ट करने के बड़े-बड़े प्रयास किये हैं। यद्यपि वे कुछ मनुष्यों के आँखों के आँसू पोंछने में सफल भी हुई, लेकिन पृथ्वी से ये सब रोग, शोक, पीड़ाएं कभी पूरी तरह नष्ट नहीं हो पाये। यही हृष्ट शौर्य एवं पराक्रम की शक्ति का भी होता रहा है। आज मनुष्य के पास विज्ञान द्वारा दी गई असीम शक्ति है जिसका प्रयोग करने से वह भूख एवं रोग इस धरती के सीने से दूर कर सकता है। क्या कहीं भी ऐसा करता हुआ दृष्टिगोचर हो रहा है? मानवता ने अत्यंत

प्रबुद्ध, उच्च आदर्शयुक्त संत-महात्माओं को भी देखा है। उनकी प्रेरणा, आग्रह एवं उपदेशों ने कुछ मनुष्यों के जीवन को सान्त्वना और श्रेष्ठता भी प्रदान की है व उन्हें भगवद्-प्राप्ति की राह पर ले जाकर उद्धार भी किया है। लेकिन पूरी मानवता के लिए क्या उपाय है? क्या वह अभी तक मृत्यु और अज्ञान के चंगुल में नहीं फँसी हुई हैं?

अतः सावित्री उन तीनों दैवी शक्तियों में से हर एक से कहती है कि वह उसकी आत्मा का एक अंश रूप है जिसे मानवता की सहायता के लिए रखा गया है। मनुष्य ने इन दैवी शक्तियों के कारण ही वह सब कुछ प्राप्त किया है जो सभ्यता एवं संस्कृति द्वारा पाया जा सकता है। वे शक्तियाँ पूर्ण-रूपेण सामर्थ्यवान नहीं हैं और इसलिए वे मनुष्यों को भी पूर्ण सामर्थ्य और मुक्ति नहीं दे सकीं हैं। इस महान् कार्य को सम्पन्न करने के लिए कुछ और अन्य शक्तियों की भी आवश्यकता है, यद्यपि ये दैवी शक्तियाँ पृथ्वी-जीवन की परिपूर्णता के लिए मनुष्य के शौर्यपूर्ण किन्तु निष्फल संघर्ष के कुछ पक्षों को सामने ला पाई हैं। उनके विकृत रूप हमें आसुरिक ताकतों के बारे में स्पष्ट करते हैं कि कैसे उन्होंने मानवी विकास-क्रम की सीढ़ी चढ़ते पाँवों को नीचे खींचा है और उनका विरोध किया है। इनका हर विकृत रूप दम्भ और हीनता के रेशम पहने कुटिल मजे ले रहा है। इस शैतान की बनावटी बातें सुनिये जो प्रेम और सहानुभूति का विकृत रूप हैं :-

मैं दुःख पुरुष हूँ, मैं वह क्रम हूँ

जिसे जगत् के विशाल क्रॉस पर कीलें ठोक दी गई;

मेरे दुःखों का आनन्द लेने के लिए भगवान् ने यह सृष्टि रची,

मेरे भावावेगों को उसने बनाया अपने नाटक का कथानक।

अपने इस निष्ठुर संसार में उसने मुझे भेज दिया
नग्न करके,
और फिर मुझे पीटा दुःख और पीड़ा की छड़ों से
ताकि मैं उसके कदमों पर गिरकर रोऊँ और
गिड़गिड़ाऊँ
और अपने रक्त और आँसुओं से उसकी पूजा
कर अर्घ्य चढ़ा दूँ।
मैं पशु की तरह श्रम करता हूँ और उसी की तरह
मर जाता हूँ,
मैं विद्रोही हूँ, साथ ही असहाय क्रीत दास हूँ,
मेरे भाग्य और मिलों ने मुझे सदा ठगा है,
मैं शैतानी दुष्टताओं का एक शिकार हूँ,
मैं कर्ता हूँ आसुरिक कारवाइयों का,
मैं "अनिष्ट" के हेतु सृजा गया था, वही मेरे भाग्य
में है
मैं "अशुभ" हूँ और वही बनकर जीऊँगा।

(पर्व 7, सर्ग 4, पृष्ठ 505,507)

क्या यह प्रलाप हमें वर्तमान समय के उन
क्रान्तिकारियों के कृत्रिम वचनों व वक्तव्यों की याद
नहीं दिलाता जिन्होंने भगवान् को तो निर्वासित कर
दिया है और जो न्याय एवं समानता के नाम पर हिंसा
और विनाश सिखा रहे हैं। ये क्रान्ति के दावेदार अपना
मिशन प्रेम और सहानुभूति से शुरू करते हैं लेकिन
अन्ततः उनके कथन घृणा और कटुता में बदल जाते
हैं। कारण, ये किसी भी स्तर पर आध्यात्मिक धरातल
और धारणा से शून्य होते हैं।

अब आप शक्ति और सौंदर्य के विकृत रूप असुर
की शेखी सुनिये जो यह सोचता है कि उसका काम
भगवान् और प्रकृति के कार्यों में सुधार करना है :-

मैं प्रकृति से अधिक महान् हूँ, भगवान् से
अधिक बुद्धिमान हूँ,

मैंने उन सब वस्तुओं को यथार्थ रूप दिया
जिसको उसने अपने स्वप्न भी नहीं देखा,
मैंने उसकी शक्तियों को कब्जे में कर उनका
अपने उद्देश्य के लिए प्रयोग किया,
मैंने उसकी धातुओं को नए रूपों में ढाला, नई
धातुएं बनाई,
मैं दूध से शीशे और वस्त्रालंकार बनाऊँगा
लोहे से मखमल और पानी से पत्थर बनाऊँगा,
ऐसा कोई चमत्कार नहीं जिसे मैं नहीं सकूँगा
घटित
भगवान् ने जो कुछ अधूरा बनाया, उसे मैं पूरा
करूँगा
जटिल मन और अर्धनिर्मित आत्मा से बाहर
निकल
उसके पाप और भूलें मैं मिटा दूँगा
जो वह नहीं कर पाया उसे मैं सृजूँगा
वह पहला सृष्टा था, मैं अन्तिम सृष्टा हूँ

(पर्व 7, सर्ग 4, पृष्ठ 512)

ये शब्द हमें उस दम्भी और नास्तिक वैज्ञानिक की
याद दिलाते हैं जो सुन्दर धरती को आणविक शक्ति
केन्द्रों और न्यूक्लियर मिसाइल्स से अलंकृत करने में
व्यस्त बना हुआ है और अपने को आखिरी सृष्टा मानता
है।

लेकिन वर्तमान हालातों को देखकर हम सभी
को ऐसा प्रतीत होता है कि वह पृथ्वी को केवल एक
कब्रगाह ही बनाने में सफल होने जा रहा है। आगे
इस असुर की बातें सुनिये जो आत्मा और भगवान् में
विश्वास नहीं करता है :-

मैं मानव हूँ, मुझे मानव ही रहने दो
जब तक मैं, अचित् में ना गिर जाऊँ, मूक और
निद्रित ना हो जाऊँ

यह सोचना कि प्रभु छिपा रहता है इस मिट्टी के
पुतले में
कि "शाश्वत सत्य यह काल"में अनुबन्धित रह
सकता है
उसे अपनी रक्षा और विश्व के परित्राण हेतु
पुकारना
है केवल एक कपोल-कल्पना और बहुत बड़ी
नादानी
मनुष्य कैसे अमर हो सकता है, दिव्य बन सकता
है?
कैसे उस मूल उपादान को रुपान्तरित कर सकता
है जिससे वह बना है?
इसका सपना देख सकते हैं वे मायावी देवगण,
विचारशील मनुष्य नहीं।

(पर्व 7, सर्ग 4, पृष्ठ 520)

उसका यह कथन हमें एक समझदार और उदार
मानवतावादी की याद दिलाता है। वह बुद्धिमान, नैतिक
चरित्र वाला और नेक भावनाओं वाला है। लेकिन वह
जीवन के आध्यात्मिक आयामों को और मनुष्य की
आध्यात्मिक नियति को अस्वीकार कर देता है। अतः
उसके समस्त सुधार और परिवर्तन अन्त में गलत और
भ्रान्त अभियान की तरह समाप्त हो जाते हैं। ये विकृत
आसुरिक रूप और इनकी ताकतें, प्रेम, प्रज्ञा और
दिव्य शक्तियों की अपेक्षा तनिक भी कम सक्रिय नहीं
हैं। वे अनवरत जीवन प्रभावी हैं। सावित्री उन सब
शक्तियों की बातें सुनती है और उत्तर में कहती है कि
केवल मानवी देह में प्रभु का अवतरण ही प्रेम-शक्ति
और प्रकाश की क्रियाओं को समन्वित तथा सुदृढ़ कर
सकता है और "अहंकार"का प्रभु में विलय कर सकता
है। यह बात वह प्रकाश की देवी से कहती है :-

एक दिन मैं लौटूंगी, "उसका"हाथ होगा मेरे
हाथ में
तब तुम देखोगी उस "परम प्रभु"के मुख की
शोभा को
तब वह शुभ परिणय-बन्धन होगा सम्पादित
और तब यहाँ दिव्य परिवार का जन्म होगा
और समस्त धरा जीवन में प्रकाश और शान्ति
का वास होगा।

(पर्व 7, सर्ग 4, 421)

सावित्री ने अपनी "आत्मा की खोज"में पड़ने
वाली बाधाओं में से एक सर्वाधिक बड़ी बाधा को पार
कर लिया है; वह अपनी आंशिक दिव्य शक्तियों एवं
उनके अहंकारी विकृत रूपों से आगे बढ़ चुकी है। तब
सावित्री एक रिक्त एवं घोर अन्धेरे प्रदेश से होकर
गुजरती है और सहसा ही पूरी तरह स्वयं को शक्ति-
सामर्थ्य से रहित महसूस करती है। कुछ ही क्षणों बाद
उसे एक परिवर्तन का आभास होता है और उसे अपने
लक्ष्य के निकट पहुंचने की कुछ आनन्दप्रद अनुभूति
होती है। अन्ततः वह अपनी आत्मा के साहचर्य में आ
जाती है :-

वे दोनों इस प्रज्ज्वलित एवं प्रकाश प्रभा कक्ष
में परस्पर मिलीं,
उन्होंने एक-दूसरे को देखा और स्वयं को जाना,
वह थी गुह्य "दिव्यता"और यह उसका मानवी
अंश,
वह प्रशान्त "अमरता" और यह संघर्षशील
जीव-सत्ता,
तब तक जादुई रूपान्तरकारी गति से
वे एक-दूसरे की ओर झपटें और एक-दूसरे में
समा गईं।(पर्व 7, सर्ग 5, पृष्ठ 527)



अमृत कण

श्रीमाँ

*आनन्द ही सत्ता है, आनन्द ही सृष्टि का रहस्य है, आनन्द ही जन्म का मूल है। आनन्द ही हमारे अस्तित्व का कारण है। आनन्द ही जन्म तथा सृष्टि की परिणिति है। आनन्द ही जागतिक सत्ता का एकमात्र कारण, हेतु तथा लक्ष्य है।

*प्रेम वह परम शक्ति है जिसे शाश्वत परम चेतना ने अपने अन्दर से एक धुँधले तथा अँधेरे तथा जगत में इसलिये भेजा कि वह उस जगत तथा उसकी सत्ताओं को भगवान तक वापस ला सके।

*सुखी होने के लिये मत जियो, भगवान की सेवा करने के लिये जियो। तब तुम जो सुख पाओगे वह सभी आशाओं से बढ़कर होगा।

*मन वर्णन करता और व्याख्या करता है। चैत्य देखता और समझता है।

*बच्चों के सामने वह कभी मत करो जिसके लिये तुम उन्हें मना करते हो।

*प्रगति यौवन है; तुम सौ वर्ष की उम्र में भी युवक हो सकते हो।

*हमारा सारा जीवन ही भगवान को निवेदित प्रार्थना होना चाहिये।

*मिथ्यात्व से ऊपर उठो, अपनी आत्मा के पवित्र प्रकाश में जियो और तब तुम प्रभु के निकट अतिनिकट होओगे।

*पृथ्वी पर सच्ची पवित्रता का अर्थ यह है कि जैसे भगवान विचार करते हैं वैसे विचारना, जैसे वे इच्छा करते हैं वैसे इच्छा करना, जैसे वे अनुभव करते हैं वैसे अनुभव करना।

*उदाहरण से बड़ी सीख कोई नहीं है। दूसरों से कहना : अहंकारी मत बनो कुछ अर्थ नहीं रखता, पर यदि तुम सब प्रकार के अहं से मुक्त हो तो वह औरों के लिये शानदार उदाहरण बन जाता है।



चाचाजी के पावन प्रसंग

नलिन धोलकिया

चाचाजी ने मेरा कान अभी भी नहीं छोड़ा है।

नरेन्द्र से पूछा कि इतनी दूर उड़ीसा से दिल्ली कैसे पहुंच गये। फिर इतनी बड़ी दिल्ली में आश्रम कैसे पहुंचे और इतने विशाल आश्रम में चाचाजी के ‘परिवार’ में प्रवेश कैसे पा गये?

नरेन्द्र ने कहानी बतायी :

“उड़ीसा में इण्टर करने के बाद कुछ काम करने की इच्छा हुई। घर में खेती थी परन्तु बाढ़-पानी से हालत अच्छी ना थी। फरीदाबाद में मेरे एक चाचाजी थे। उनके पास पहुँच गया और वहाँ से दिल्ली घूमने आया।”

“उड़ीसा में श्री अरविन्द आश्रम के लोगों से परिचय था ही। दिल्ली में भी आश्रम है यह पता था। सो देखने चला गया।”

“आश्रम में घुसा कि सामने एक रोबीले, शानदार व्यक्ति दिख गये। वे काम की देखभाल कर रहे थे। मैं भी उत्सुकतावश वहाँ पहुँच गया।”

“परन्तु जैसे ही मैं वहाँ पहुँचा, उन सज्जन ने लपक कर मेरा कान पकड़ लिया। मेरी तो डर के मारे जान सूख गयी। सोचा यहाँ आकर मैंने गलती की है।”

“वे सज्जन वर्कर्स को सूचनाएं दे रहे थे पर मेरा कान अब भी उनकी पकड़ में था। अंत में मुझे गुस्सा आ गया। मैंने जोर से पूछा कि आप मेरा कान क्यों पकड़े हैं?”

“परन्तु उन्होंने ध्यान ही नहीं दिया। थोड़ी देर बाद वे चल पड़े। पर मेरा कान अब भी उनके हाथ में था।”

मैंने चलते-चलते फिर गुस्से से पूछा-“आप मेरा कान क्यों नहीं छोड़ रहे हैं?”

“परन्तु उन्होंने कान पकड़े-पकड़े ही प्रश्नों की बौछार लगा दी। नाम-धाम, मैं कहाँ ठहरा हूँ, क्या करता हूँ—पूरी जानकारी उन्होंने हासिल कर ली।”

“अंत में कमरे में पहुँचे। पर कान अभी भी छूटा नहीं था।”

“इस बार तो मैंने लगभग चिल्लाकर ही पूछा, “आप मेरा कान क्यों नहीं छोड़ते?”

तब उन्होंने जवाब दिया, “अरे बेवकूफ, उल्लू, इतना भी नहीं समझता? अगर भगवान् ने ना भेजा होता तो तू यहाँ आता ही क्यों? भगवान् ने ही तुझे मुझसे मिलाया है। अब तू इधर-उधर का काम करेगा? भगवान् का काम नहीं करेगा? अभी से तू यहीं काम में लग जा। अब तू कहीं नहीं जायेगा।

तब से तीस वर्ष हो गये। लगता है जैसे अभी भी चाचाजी ने मेरा कान नहीं छोड़ा है।

यदि नृत्य जीवन में उतर जाये तो कहीं झगड़ा ही ना रहे—

बाहर से देखने से नहीं लगता था कि चाचाजी का कला से भी कोई वास्ता होगा। ईंट, चूना, गारा, पत्थर, लोहा-इन पंचतत्वों के मेल से उनकी दिनचर्या रूपायित होती थी। धमाके से चलते निर्माण और ध्वंस-कार्य का शोर था उनका संगीत और बारा-पत्थर से ऊपर आश्रम तक लोहे की छड़ों के भारी-भरकम बंडलों को ढो कर लाते श्रमिकों की अंग-भंगिमा थी उनका नृत्य।

चाचाजी के श्रमिक-पुत्र अभी भी यह किस्सा याद करते हैं, “छत डाली जा रही थी। युद्ध-स्तर पर कार्य चल रहा था। एक तरफ सीमेंट-रोड़ी का मिश्रण तैयार हो रहा था। एक ढल तसले भर-भर मसाला ऊपर

पहुँचा रहा था। खाली तसले नीचे फेंके जा रहे थे। मिस्त्री चिल्ला कर आदेश दे रहे थे। श्रमिकों का शोर अलग से। पूरा माहौल ऐसा कि कुंभकर्ण भी सो ना सके। परंतु देखा कि चाचाजी परम शान्ति से अपनी कुर्सी पर निद्रामग्न हैं, पूर्णतया समाधिस्थ। जैसे लोरी सुनते-सुनते सो गये हों ! तब श्रमिकों को शैतानी सूझी। कुछ पलों के लिये उन्होंने काम रोक दिया। अचानक एक दम सन्नाटा छा गया। चाचाजी एकाएक चौंक उठे: “अरे उल्लू के पट्टों! काम क्यों रोक दिया? जानते नहीं कि अभी कितना काम पड़ा है करने को”? और फिर बज उठी श्रम-सिंफनी।

ऐसे कठोर आवरण के तले, कला के सुकुमार स्पर्श से स्पंदित होती संवेदनशीलता के पनपने की कल्पना भी नहीं की जा सकती। परंतु किसी एक परिभाषा में बँध सके इतना उथला व्यक्तित्व नहीं था चाचाजी का। कोई भी एक आवरण-कठोर या मृदु उनको बाँध कर नहीं सकता था। लोहे के छड़ की झन्नाहट और तानपूरे के तारों के अनुरणन के बीच चलती थी जुगलबंदी चाचाजी की महफिल में। कहीं कोई विरोधाभास नहीं था।

उस दिन वन निवास नैनीताल के ध्यान कक्ष में अचानक जम गयी महफिल। नैनीताल की उदीयमान नृत्य-साधिका पूनम जोशी ऊपर आश्रम में आयीं थीं। बनारस से कौशिक भी आया था। उसको नृत्य के साथ-साथ तबला-संगत करने का अवसर मिले इस उद्देश्य से करुणा दीदी ने रची थी यह संगीत सभा।

चाचाजी उस समय काफी अस्वस्थ थे। वर्षा और ठंड से उनका पूरा श्वास-संस्थान ग्रस्त था। परन्तु फिर भी वे हॉल में आकर बैठ गये। बहुत देर तक नृत्य का अभ्यास होता रहा। ध्यान-कक्ष में लय-ताल-लास्य के माध्यम से साक्षात भगवान् उतर आये थे। सभी ध्यान मग्न थे।

जब नृत्य समाप्त हुआ तो चाचाजी की ओर ध्यान गया इतनी देर से बैठे हैं। नैनीताल की ठंड, नमी। थक तो नहीं गये होंगे? श्वास तो नहीं घुट रहा होगा? परंतु चाचाजी को बीमारी भी ओढ़ने-उतारने की सिद्धि हासिल थी। उनका रूग्ण शरीर और मन अभी भी नृत्य की थिरकनों से स्पंदित था। पूनम आशीर्वाद लेने गयी तो बोले: “मैं देख कर दंग हूँ। तुमने कमाल कर दिया। यही नृत्य जीवन में उतर जाये तो कही झगड़ा ही ना रहे।”

बाहर से भीतर की ओर-

नैना-शिखर, कोमल्स बैंक, टिफिन-टॉप पर धीरे-धीरे शाम उतरती है। दूर सामने की चोटी पर स्थित रडार-केंद्र पर अभी कुछ क्षण पूर्व धूप थी। अब समस्त रूप-जगत पर एक पर्दा सा पड़ रहा है। लगता है कोई महास्वामी, ध्यान की गहराइयों में उतर रहा है। यह-वह, मेरा-तुम्हारा, दूर-पास, ऊँचा-नीचा, काला-सफेद सारे भेद-विभेद मिटते जा रहे हैं। नीचे घाटी के घर-आँगनों से उठता जीवन-रव थम गया है।

तभी मेरे पैर चाचाजी के कमरे की ओर मुड़ गये। देखा चाचाजी पलंग पर अधलेटे से बैठे थे। उतरती शाम के सन्नाटे में ध्यानस्थ नैना-शिखर की तरह भव्य, शान्त और निर्लिप्त। आज ध्यान-कक्ष तक जाकर बैठने की शक्ति भी उनके शरीर में नहीं थी।

चाचाजी का ध्यान-पूजन अर्थात् कमरतोड़ काम। निर्माण-कार्य। आश्रम-भवनों को, संपर्क में आने वाले लोगों को, और स्वयं को भी निरंतर गढ़ते चले जाना-यह था चाचाजी का योग। इसलिये मैंने दिनभर के कार्यकलापों का ब्यौरा दिया और अगले दिन होने वाले कार्यों के संबंध में निर्देश प्राप्त किया।

और इसी बीच, बिना किसी भूमिका के, चाचाजी ने कहा, “नलिन जी, मैं अब अंदर जाना चाहता हूँ।”

मैं अवाक्! आँखों में प्रश्नों की झड़ी भर कर उनकी ओर देखता रहा।

कहने लगे, “मेरे शरीर में अब कुछ भी बाकी नहीं रहा। चारपाई के नीचे पैर नहीं रख सकता। रोंये-रोँये में दर्द है। बोलने में साँस भर आती है। इसका मतलब है कि बाहर रह कर तूफान की रफ्तार से दौड़ने का मेरा वक्त पूरा हुआ। अब तो अन्दर की ओर चलते चले जाना है।” महाध्यान की अतल गहराइयों से उठ रही

है यह निराशा अथवा थके मन का निश्वास है यह-मेरे मन में शंका उठी। पूछ बैठा “फिर सारे कामों का क्या होगा ? काम भी समेट लिये जायें?”

“बिल्कुल नहीं! हरगिज नहीं! अंदर रह कर भी बाहर के काम चल सकते हैं। यही तो देखना है अब।” चाचाजी के स्वर में किसी विराट चुनौती को स्वीकार करने की दृढ़ता थी।

और यही हुआ।



बिना थके कार्य करने का सबसे अच्छा उपाय है अपने कार्य को (वो जो भी है) भगवान् को समर्पित करने और जो भी तुम्हें सहायता की आवश्यकता है उसे भगवान् से ही प्राप्त करना। क्योंकि दिव्य शक्ति अनन्त है और जो भी उसको निष्कपटता से दिया जाता है उसका हमेशा उत्तर देती है।

फिर जब तुम यह अनुभव करो कि दिव्य शक्ति ने ही तुम्हारे द्वारा सब काम किया है, अपनी निष्ठा में तुम यह जान लोगे कि सब गुण उसके हैं तुम्हारे नहीं और तुम्हारे लिये उन पर गर्व करने का अन्य कोई कारण नहीं है।

आशीर्वाद
-माताजी

हिमालय का फ़कीर

के. एन. वर्मा

गतांक से आगे...

माँ मन्दिर के साथ उनका अटूट सम्बन्ध

उनके हृदय में माँ मन्दिर के लिये विशेष स्थान था। अपने पहले ही आगमन पर उन्होंने यहाँ किसी विशिष्ट चीज का अनुभव किया। जीवन के अंतिम वर्षों में उनका यहाँ तीन बार आगमन हुआ और लगभग इतने ही बार टिकट कटाकर उन्हें अपनी यात्रा स्थगित करनी पड़ी, क्योंकि तब या तो वे बीमार पड़ गये होते या आकस्मिक रूप से कोई ऑपरेशन (operation) अनिवार्य हो गया होता। जब भी वे यहाँ आते, उनके साथ उनका भारी भरकम दल भी साथ आता था। इस दल में कई विदेशी शिष्य भी होते थे। उनकी इच्छा थी कि माँ मंदिर का अपने सम्पूर्ण कार्यों में स्वतंत्र अस्तित्व हो जिससे वह अपने 'स्व' को स्वच्छन्दतापूर्वक उत्तमोत्तम ढंग से अभिव्यक्त कर सकें, कभी हम चाहते थे कि माँ मंदिर अपनी अलग पहचान व स्वतन्त्र सत्ता बनाये रखकर अंतर्निहित संभावनाओं को अपने ही ढंग से विकसित करे।

जब औरोविल को केन्द्र सरकार ने अपने हाथों ले लिया तो उन्हें इस बात की आशंका हुई कि कहीं श्रीअरविन्द सोसायटी पॉण्डिचेरी द्वारा प्रशासित सभी केन्द्रों को भी सरकार अपने हाथों में ना ले ले। यदि ऐसा हुआ तो ऐसी सारी संस्थाएँ संकट में पड़ जाएँगी। इसीलिये उन्होंने लिखा 'मैं चिंतित हूँ, आप श्रीअरविन्द ग्राम तथा माँ मंदिर को कैसे बचा पायेंगे। माँ मंदिर का स्वतंत्र अस्तित्व होना चाहिये, इसे किसी भी संस्था के साथ सम्बद्ध नहीं किया जाना चाहिये,

यहाँ तक कि दिल्ली आश्रम के साथ भी नहीं। अपने आपको जितना अधिक स्वतंत्र रख सकें, स्वतंत्र रखें।"

(26/12/79)

उनका यह परामर्श माँ मंदिर को अपनी अलग पहचान बनाने और अपने ढंग से फलने-फूलने में लाभकारी ही नहीं संजीवनी सिद्ध हुआ। उनकी इस दूरदृष्टि के लिये हम कितने कृतज्ञ हैं।

25 सितम्बर 1984 को जौहर साहब का माँ मंदिर में आगमन जो उनका अंतिम आगमन था, सचमुच में एक जौहर ही था। सुश्री ताराजी के सौजन्य से दिनांक 24 से 30 सितम्बर के बीच यहाँ अखिल भारतीय श्री अरविन्द विद्यालयों का शिक्षा सम्मेलन आयोजित हुआ था। किसी गाँव में इस प्रकार का वृहद् आयोजन पहली बार किया गया था और इस सबके पीछे तारा जी का कुशल प्रबंधन और संगठनात्मक कौशल काम कर रहा था। इस भव्य सम्मेलन में अकेले दिल्ली से 30 प्रतिनिधियों और उड़ीसा से 43 शिक्षकों सहित विभिन्न प्रदेशों से प्रतिनिधियों ने भाग लिया था। इसका उद्घाटन करने के लिये हमने श्री जौहर साहब से प्रार्थना की थी। उस समय वे नैनीताल में थे। उनका स्वास्थ्य बहुत खराब चल रहा था और बिस्तर से उठ पाने की भी शक्ति नहीं थी।

लेकिन उनके अदम्य साहस और इच्छा शक्ति से असंभव भी संभव हो जाता था इसका हमें पता था, इसलिये हम आने के लिये आग्रह करते रहे। उनका 'ना' भी बराबर आता रहा। 24 ता0 को दिल्ली से

आने वाले दल के साथ जब वे नहीं आये तो लगभग तय हो गया कि उनका पहुँच पाना संभव नहीं है। 24 को सम्मेलन प्रारंभ हो गया। 25 की शाम को लगभग 5 बजे उनका स्टेशन वैगन जब माँ मंदिर आ धमका तो हमारे सुखद आश्चर्य का पारावार नहीं था। वे बीमारी की गंभीर अवस्था में ही स्टेशन वैगन में लेटे-लेटे नैनीताल से दिल्ली होते हुये तीन दिन में माँ मंदिर पहुँचे थे। 1200 किलोमीटर की लम्बी यात्रा स्टेशन वैगन में बिना भोजन व विश्राम के!!

जब वे पहुँचे तो उनका शरीर पूरी तरह निर्जीव हो चुका था-ना उठने की शक्ति थी और ना बोलने की। उन्हें स्टेचर पर कमरे तक ले जाया गया। बिना हिले-डुले, बिना बोले, बिना अन्न-जल ग्रहण किये वे रातभर पत्थर की तरह लेटे रहे। 27 की सुबह वे लॉन में कुर्सी पर बैठे चाय पीते दिखे। प्रसन्नता हुई। आकर मैंने चरण स्पर्श किया।

‘कैसे हैं?’ ‘ठीक हूँ।’ ये दो शब्द हमारे बीच के अंतिम सम्वाद सिद्ध होंगे-यह मुझे मालूम नहीं था।

लेकिन जिस प्रकार उनके आगमन ने हमें आश्चर्य चकित किया उसी प्रकार उनके अंतर्धान ने भी हमें चकित किया। चाय पीने के बाद वे कितनी देर गायब हो गये-इसका किसी को पता नहीं चला-यहाँ तक कि उनकी छाया करुणा दीदी को भी नहीं। शाम को लगभग 4.30 बजे मैहर से आये सन्देशवाहक से पता चला कि जौहर साहब खजुराहो से हवाई जहाज पकड़कर दिल्ली चले गये। हम सभी दंग रह गये। एक सप्ताह बाद हमें पता चला कि बीमारी की गंभीर

अवस्था में वे दिल्ली से तुरंत खुर्जा पहुँचे, जहाँ वैद्यराज के निर्देशन में उनका आयुर्वेदिक इलाज शुरू हुआ। उनके अद्भुत ढंग से प्रकट होने और अदृश्य हो जाने का राज किसी को मालूम नहीं हो पाया। बार-बार के पूछने के बाद उन्होंने इतना ही पत्र में संकेत दिया कि उनका आना-जाना या चलना-फिरना कुछ भी उनके हाथ में नहीं था सब कुछ एक अदृश्य शक्ति द्वारा संचालित होता था। और कहा-

"इस बात को समझाया नहीं जा सकता।"

उन्होंने इसके पूर्व भी लिखा था कि पाण्डिचेरी छोड़कर उनका कहीं भी आना-जाना नहीं होता। श्री माँ के शरीर त्याग के बाद अब वहाँ भी जाना संभव नहीं होता। लेकिन माँ मन्दिर के साथ उनका लगाव विशिष्ट था।

भगवान् के लिये उनका आत्मदान और समर्पण अद्वितीय है। आत्मिक उत्थान के इतिहास में सम्पूर्ण समर्पण का उनका जैसा दूसरा उदाहरण पाना कठिन है। उनकी 'Fateful journey' स्वयं उनकी फ़क्रीरी व नियति का हाल कह देती है-

"मैं (पाण्डिचेरी में) अपने दिल को खो बैठा लेकिन आत्मा को जीत लिया।" अपने स्वयं के आलीशान महल के दरवाजे पर माँ की ओर से चौकीदारी करना अपना सौभाग्य माना। और जितना ही उन्होंने आत्मदान किया, उतना ही अधिक कष्ट झेला। उनके असह्य कष्टों और वेदना के, अकल्थ्य वरदानों पर पूरा एक वृहद ग्रंथ ही लिखा जा सकता है...

....क्रमशः



मातृ गुडविल स्टोर

सोनी

श्री अरविन्द दिल्ली शाखा का मातृ गुडविल स्टोर एक ऐसा स्थान है जहाँ हमारे प्रतिदिन के जीवन की सभी आवश्यक वस्तुयें कम दामों पर उपलब्ध हैं। यहाँ नर्सरी से लेकर विश्वविद्यालय स्तर तक की पाठ्य पुस्तकें, विश्व प्रसिद्ध हिन्दी व अंग्रेजी भाषा का साहित्य, उपन्यास, कविता संग्रह, बच्चों की कहानियाँ,



आध्यात्मिक, धार्मिक व दैनिक स्वास्थ्य सम्बन्धी सभी पुस्तकें बहुत ही कम दामों पर उपलब्ध हैं।

इसके साथ ही कपड़े, बर्तन, बच्चों के खिलौने, सजावटी सामान, पेंटिंग्स, हस्त निर्मित कागज, लकड़ी का सामान जैसे- छोटे-छोटे बॉक्स, काष्ठ निर्मित जानवरों की आकृतियाँ और श्री अरविन्द आश्रम दिल्ली में ही बनाये गये हैंड बैग आदि भी मिलते हैं। आश्रम में आने वाले यहाँ से खरीददारी करते हैं तथा एक ही स्थान पर आवश्यकता की अनेक वस्तुएँ मिल जाने का लाभ उठाते हैं। कभी-कभी बाहर से भी नहीं मिल पाने वाला सामान यहाँ पर मिल जाता है।

यहाँ तुलसी (Tulsi), नीम (Neem), एलोवेरा



(Aelovera), Lemon Grass, Croton, केला (Plantain), करीपत्ता (currytree), चमेली (jasmine), अजवाइन, पत्थर चट्टा (Pattarchatta) आदि आश्रम में ही उगाये जाने वाले पौधे उपलब्ध हैं। साथ ही यहीं पर बनायी जाने वाली पूर्णतः रसायन मुक्त खाद भी यहाँ से ली जा सकती है।



यहाँ पर हुयी बिक्री की धनराशि जरूरतमंद संस्थाओं, गाँवों व स्कूलों में भेज दी जाती है।



बोध-विनोद

सुरेन्द्रनाथ जौहर

मेरा नया जूता

मेरा जूता जब पुराना हो गया तो मुझे नया खरीदना पड़ा परन्तु हिम्मत नहीं हुई कि उसे पहँनू। क्योंकि जमीन पर चलने से तो वह घिस जाता और मैला होकर वह भी पुराना हो जाता। अतएव मैंने नये जूते को अलमारी में अच्छी तरह सम्हालकर बन्द कर दिया। कई दिन बाद मुझे सेठ गोविन्ददास, हिन्दी के प्रमुख नाटककार व संसद सदस्य के घर जाना पड़ा। मैंने कपड़े तो अच्छे पहन लिये किन्तु जब जूते की तरफ देखा तो बहुत भद्दा लग रहा था।

मुझे याद आया कि मैंने नया जूता खरीदकर अलमारी में रखा हुआ था। उसे ही आज पहनकर जाना चाहिये। नया जूता निकालना ही पड़ा और पहनना ही पड़ा। ख्याल था कि नये जूते की शान रहे। जब मोटर से उतरकर सेठ गोविन्ददास जी की कोठी में पहुँचा तो मुख्य द्वार के बाहर की ओर बोर्ड लगा था— जिस पर खूब स्पष्ट व सुन्दर ढंग से लिखा था, यह भारतीय घर है कृपया जूता उतारकर अन्दर आइये। मेरे नये जूते की बेइज्जती हो गई। पुराना पहना होता तो उसकी इज्जत तो ना खराब होती...।

लेकिन अब क्या हो सकता था, अब तो पहन ही चुका था। परन्तु जब घर के अन्दर गया तो तबियत खुश हो गई। सचमुच ही यह भारतीय घर था। इतना सुन्दर, स्वच्छ, साफ-सुथरा घर, शुद्ध व पवित्र वातावरण से पूरित। कहीं कोई मेज़ नहीं, कोई कुर्सी नहीं, कोई सोफ़ा-सेट नहीं। फर्श चमक रहे हैं। कहीं-कहीं चटाईयाँ बिछी हुई हैं। कुछ पीठिकाएँ (पीढ़ियाँ) भारतीय परम्परागत सौंदर्य से अलंकृत लगी है।

एक कमरे में जमीन पर गद्दा बिछा हुआ है। उस पर बर्फ की तरह सफेद-शुभ्र चादर बिछी है। गोल तकिये अपने स्थानों पर सजे हुये हैं।

तब मैं नये जूते की बेइज्जती को बिल्कुल भूल गया।

खच्चर

मैंने किस्मत को भी देख लिया घिस-घिस के!

मुझे यहाँ हिमालय में सात दिन के लिये भेजा गया था। क्योंकि मेरा स्वास्थ्य कुछ अच्छा नहीं था। यहाँ आकर मैं साधना और तपस्या में फँस गया। और अब नौ महीने हो रहे हैं। यहाँ मेरा साथ और सत्संग सारा दिन खच्चरों और पठानों के साथ रहता है।

क्या खूब! पहाड़ की चोटी पर जहाँ हमारा स्थान है वहाँ कोई ट्रक तो आ नहीं सकते वे तो हमारा सब सामान नीचे सड़क पर ही फेंककर चले जाते हैं और ये खच्चर ही सारा दिन ऊपर ढोते रहते हैं। मेरा काम सारा दिन ईंट-पत्थर, रेत, बजरी, चूना, लोहा, सीमेंट, नापना, गिनना और सँभालना रहता है। सात खच्चर। ऊपर-नीचे। ताँता लगा रहता है।

मैं इनकी बुद्धि, सूझबूझ, चतुराई और स्वानुशासन देख-देखकर हैरान रह जाता हूँ। जब इनकी पीठ पर ईंटें लदी होती हैं तो सीधे वहाँ जाते हैं जहाँ ईंटें उतारनी होती हैं। जब इनकी पीठ पर रेत या बजरी होती है तो जहाँ रेत व बजरी के चट्टे लगाये जाते हैं वहाँ जाकर खड़े होते जाते हैं। जब इनकी पीठ पर सीमेंट लदा होता है तो सीधे सीमेंट के गोदाम के अन्दर चले जाते हैं। हैरानगी की बात है! इतनी ही नहीं। उनका हाँकने वाला छड़ी हाथ में लिये हुये जब पीछे से आता है

तो उसके पहुँचते ही झट पीठ झुका देते हैं ताकि वह आसानी से बिना झटके के बोझ उतार सके और कई बार तो वे खुद ही बोझ उतारकर फेंक देते हैं।

बोझा उतारते ही वे आराम से एक-एक करके चल देते हैं और इधर-उधर घास चुगने लगते हैं-इस इंतज़ार में कि जब तक उनके सभी साथी अपना-अपना बोझ उतार कर ना आ जायें, और जब कभी समय मिले या दाँव लगा तो लोट भी लेते हैं। बस! फिर नीचे की ओर की भागते हैं। अगला बोझ लाने के लिये। कोई कोताही नहीं-कोई ढाल नहीं-कोई शिकायत नहीं। यह दौर चलता ही रहता है। इन सबके गले में रसीली और सुरीली घंटियाँ बँधी रहती हैं जिनमें उनकी चाल और दौड़ से लय बँधी रहती है और वातावरण में आनंद की गूँज बनी रहती है।

आप हैरान होंगे कि ये प्रातः पाँच बजे अपना चारा आदि खाकर अपने काम पर आ जाते हैं और दोपहर तक बगैर साँस लिये लगे रहते हैं। तत्पश्चात् छुट्टी कर जाते हैं। इन खच्चरों की आँखें ऐसी चमकती हैं जिनमें उनकी बुद्धि और सूझ-बूझ साफ़ झलकती है जैसे कि किसी बुद्धिमान और सूझ-बूझ वाले मनुष्य में।

एक दिन मैं सड़क पर खड़ा उनका इंतज़ार कर रहा था। इतने में वे बोझ उठाये हुये आ गये। सामने एक चौड़ी नाली थी। जिस पर से साधारणतया बगैर सोचे-समझे लाँघना कठिन था। पहले खच्चर ने बहुत सूझ-बूझ और खूब सम्हलकर नाली के पार पाँव रखने की कोशिश की। बदकिस्मती से उसका पाँव फिसल

गया और शायद गहरी चोट आ गई। मुझसे उसका चेहरा देखा नहीं गया। जिससे साफ़ नज़र आता था कि उसको बुरी चोट आई है और उसके चेहरे का भाव किसी मनुष्य की भाँति ही भर आया था। मुझे यह देखकर बहुत तरस आया और दुःख हुआ। नमनीयता व मिटाव की प्रतिमूर्ति ये मूक पशु खच्चर इन दुर्गम पर्वतों पर निरंतर लगे रहते हैं-काम करते हैं-जिनमें अहसास है, सूझबूझ है, चेतना है। जहाँ ये मनुष्य की वैज्ञानिक उपलब्धियाँ-साधन ट्रक आदि असफल हो जाते हैं वहाँ ये भगवान की रचना-खच्चर ही कारगर होते हैं।

एक साधु किसी सड़क पर गहरी समाधि में लेटे हुये थे। उधर से गुजरते हुये एक चोर ने उन्हें देखकर सोचा : “यह आदमी जो यहाँ पड़ा है जरूर कोई चोर है। सारी रात किसी घर में सेंध लगाते-लगाते थककर (पुलिस से बचने के लिये) यहाँ सो रहा है। जल्दी ही पुलिस इसे पकड़ने के लिये आयेगी तो मैं भी पकड़ा जाऊँगा। उसके आने से पहले मुझे यहाँ से भाग जाना चाहिये।” यह सोचकर वह भाग निकला। थोड़ी देर बाद एक पियक्कड़ आया। उसने कहा : “ओहो ! तुम जरा ज्यादा पी गये हो और पीकर गिर पड़े हो। मैं तुमसे कहीं अधिक ठोस हूँ और तुम्हारी तरह गिरनेवाला नहीं हूँ।

सबसे अंत में एक साधु आये। वे समझ गये और बड़े श्रद्धा-भाव से उनको प्रणाम किया और धीमे से उनके पवित्र चरण दबाने लगे।



आश्रम में पिछले तिमाही के कार्यक्रम

15 अगस्त 2017- 'युवा' श्री अरविन्द आश्रम दिल्ली शाखा का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं।

आश्रम से जुड़े हुये सभी युवाओं को आश्रम में हो रहे कार्यक्रमों की जानकारी देने के लिये श्री अरविन्द आश्रम द्वारा एक वेबसाइट(www.bit.ly/ashramyouth) तैयार की गई, जिसका शुभारम्भ तारा दीदी द्वारा किया गया। इसमें आश्रम में हो रही गतिविधियों, आगामी कार्यक्रमों की जानकारी तथा आश्रम में हो रहे सभी कार्यक्रमों के चित्र और वीडियो भी उपलब्ध हैं। अन्य सभी प्रकार की सूचना जैसे-आश्रम में प्रतिदिन होने वाली गतिविधियों की जानकारी भी दी जाती है।



2 सितम्बर 2017- श्री सुरेन्द्रनाथ जौहर की पुण्यतिथि- सुबह 6:15 पर चाचाजी की समाधि पर पुष्प अर्पण, प्रातः 8:30 हवन, संध्या समाधि पर दीप दान तथा 6:45 संगीत संध्या के उपरान्त तारा दीदी ने चाचाजी के जीवन के बारे में विस्तार से बताया। 7:40 पर प्रसाद वितरण किया गया।



4.09.2017 से 14.09.2017- आश्रम के युवाओं द्वारा (Multi Talents Sports Tournaments) का आयोजन किया गया। जिसमें कबड्डी, फुटबॉल, बॉस्केटबाल, फ्रिज़बी एवं क्रिकेट खेलों का आयोजन हुआ। ये खेल 8 टीमों के द्वारा खेले गये जिनमें आश्रम के सभी युवाओं ने भाग लिया।

सभी ने बहुत उत्साह के साथ सभी खेलों का आनन्द लिया।

2 अक्टूबर 2017- इस दिन प्रातः आश्रमवासियों और बाहर से आये हुये कुछ लोगों ने मिलकर तीन घण्टे तक श्रमदान किया। जिसमें ध्यान कक्ष के चारों ओर, क्यारियों और बगीचे की सफाई की गयी। सभी लोगों ने बड़े उत्साह के साथ कार्य किया।



17 नवम्बर 2017- श्रीमाँ का महासमाधि दिवस।



हमारी गतिविधियाँ

ध्यान कक्ष- आश्रम में एक विशाल ध्यान कक्ष है। यहाँ सोमवार से शनिवार तक प्रति दिन सायं 7 से 7:30 बजे तक आध्यात्मिक एवं भक्ति संगीत, श्री अरविन्द-श्री माँके वचनों का पाठ, ध्यान एवं सत्संग होता है। प्रत्येक रविवार को प्रातः 10 बजे से लगभग 11:15 बजे तक सत्संग और किसी आध्यात्मिक विषय पर वार्ता का आयोजन होता है। ध्यान कक्ष ध्यानार्थियों के लिये दिन भर खुला रहता है।

व्याख्यान-माला एवं अध्ययन शिविर- विद्वानों एवं साधकों द्वारा श्री अरविन्द के पूर्ण योग और उनके महान दर्शन पर व्याख्यान सारे वर्ष समय-समय पर होते रहते हैं। ग्रीष्म एवं शरद ऋतुओं में आश्रम के नैनीताल स्थित हिमालय केन्द्र वन निवास में अध्ययन शिविरों का आयोजन होता है।

‘ज्ञान’ पुस्तकालय एवं वाचनालय- पुस्तकालय में योग, धर्म, दर्शन, साहित्य, शिक्षा, विज्ञान इत्यादि विषयों पर अनेक पुस्तकों एवं पत्रिकाओं का संवर्द्धनशील संग्रह है। यह संग्रह 16 भारतीय और विदेशी भाषाओं में है।

सोमवार को छोड़कर अन्य दिन वाचनालय सबके लिये खुला रहता है। 300 रुपये सुरक्षा राशि (वापसी सहित) आश्रम कार्यालय में जमा करके आप पुस्तकालय से घर पर पढ़ने के लिये पुस्तक भी ले सकते हैं।

पुस्तकालय के संवर्द्धन हेतु अच्छी पुस्तकों, पत्रिकाओं के दान का स्वागत है।

श्री अरविन्द पुस्तक वितरण एजेन्सी 'शब्द' दिल्ली शाखा- यह शाखा श्री अरविन्द आश्रम पुदुच्चेरी एवं दिल्ली शाखा द्वारा प्रकाशित श्री अरविन्द साहित्य तथा चित्रों की उत्तरी भारत में बिक्री करती है। यहां

से अगरबत्ती, हस्तनिर्मित कागज, भक्ति गीत कैसेट, सी.डी., ग्रीटिंग कार्ड और अन्य आश्रम उत्पादों की बिक्री भी होती है।

आश्रम पत्रिकायें- “श्री अरविन्द कर्मधारा” (हिन्दी) और “दि कॉल बियाँड” (अंग्रेजी) हमारी दो त्रैमासिक पत्रिकायें हैं। ये पत्रिकायें सद्भावनायुक्त एवं शुभकांक्षी लोगों तक एक श्रेष्ठतर भारत और श्रेष्ठतर विश्व के निर्माण हेतु श्री अरविन्द और श्री माँ की महान शिक्षाओं के प्रसार एवं क्रियान्वयन में हमारी सहायता करती हैं-ये पत्रिकायें श्री अरविन्द आश्रम दिल्ली शाखा की ऑनलाइन पब्लिकेशन हैं व निःशुल्क उपलब्ध हैं।

मदर्स इंटीग्रल हैल्थ सेण्टर- विद्यालयों के छात्रों और आश्रमवासियों की स्वास्थ्य-संबंधी आवश्यकताओं के लिये यह एक स्वास्थ्य केन्द्र है। यहाँ छात्रों का वार्षिक स्वास्थ्य परीक्षण भी होता है। रविवार को छोड़कर प्रतिदिन स्वास्थ्य केन्द्र प्रातः 8:30 से अपरान्ह 3:30 बजे तक खुलता है। इसमें होमियोपैथी, फिजियोथैरेपी तथा दन्त चिकित्सा सहित अनेक अतिरिक्त विशिष्ट क्लिनिक भी नियमित रूप से चलते हैं। मिलने एवं अन्य सूचना के लिये डा0 बवेजा से दूरभाष संख्या : 26858563 पर प्रातः 9 से 12 के बीच संपर्क कर सकते हैं। योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा आयुर्वेद, एक्जुप्रेसर, नेत्र चिकित्सा के लिये व्यायाम और शिथिलन शैली भी उपलब्ध है।

योग की कक्षाएं- आश्रम में सप्ताह में तीन दिन प्रातः 6:45 बजे, पूर्वाह्न 11 बजे और सायं 4 बजे तथा सायं 5 बजे आसन और प्राणायाम की कक्षायें कुशल योगाचार्यों द्वारा नियमित ली जाती हैं। ऐसी कक्षाओं की भारी मांग है। श्री अरविन्द और श्री

माँ के पूर्ण योग पर आधारित योग शिविर समय-समय पर दिल्ली, नैनीताल या मधुबन तल्ला रामगढ़ (नैनीताल) में आयोजित किये जाते हैं। 'योग केवल आसन नहीं अपितु एक जीवन शैली है,' 'योग केवल शरीर के लिये ही नहीं, मन के लिये भी है' तथा 'योग का उद्देश्य आध्यात्मिक विकास है।' हमारे शिविरों में प्रवचन, अभ्यास, संगीत, सामूहिक गतिविधियों और व्यक्तिगत परामर्श द्वारा पूर्णयोग के तत्व जीवंत बनकर उभरते हैं। शिविरों का समय और अन्तर्विषय विभिन्न वर्गों विद्यार्थी, कार्यरत वर्ग, गृहणियों आदि की आवश्यकता के अनुकूल होता है। अधिकांश लोग शिविर में शारीरिक रूप से स्वस्थ होने के लिये भाग लेते हैं, परन्तु शिविर समाप्त होने तक मानसिक एवं आध्यात्मिक रूपान्तर के लिये प्रेरित हो जाते हैं। परिणाम यह होता है कि शारीरिक स्वास्थ्य लाभ एक उपफल हो जाता है। आगामी शिविरों की जानकारी के लिये आश्रम के स्वागत कक्ष से फोन या ई-मेल द्वारा सम्पर्क करें।

आश्रम रसोई-आधुनिक यंत्रों से सुसज्जित आश्रम रसोई में स्वास्थ्य और स्वच्छता के नियमों का पालन करते हुये सादा एवं पौष्टिक आहार बनता है। आश्रम के भोजनालय में यह आहार आश्रमवासियों एवं अतिथियों को परोसा जाता है। बेकरी में उच्च कोटि की सोया-समुद्र ब्राउन डबल रोटी और अनेक प्रकार के अंडा रहित बिस्किट, केक आदि भी बनते हैं।

फल केन्द्र- प्रति वर्ष जून से अगस्त तक फल केन्द्र में तल्ला रामगढ़ (नैनीताल) स्थित आश्रम के बाग में फलोत्पादन कीटनाशकों और रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग किये बिना होता है। बड़ी मात्रा में फलों के रस और मुरब्बे भी तैयार किये जाते हैं।

आश्रम उद्यान- आश्रम का उद्यान विभाग विद्यालय और आश्रम परिसर के बगीचों का रख-रखाव करता

है और पूजा तथा सजावट के लिये पुष्प और आश्रम की रसोई के लिये सब्जियाँ उगाता है। यहाँ उत्पादित अनेक प्रकार के पौधे व सब्जियाँ गुडविल स्टोर के माध्यम से बिकते हैं।

हस्तनिर्मित कागज, पेपर क्रॉफ्ट, जिल्दसाजी एवं स्क्रीन प्रिंटिंग: आश्रम की हस्तनिर्मित कागज की लघु इकाई में प्रचुर विविधता के उच्च कोटि के कागज, गत्ता, ग्रीटिंग कार्ड, लेखन एवं सज्जा सामग्री इत्यादि रद्दी कागज और प्राकृतिक पदार्थों के सदुपयोग से बनाये जाते हैं। ये वस्तुएँ "सबदा" में बिकती हैं। यहाँ जिल्दसाजी की भी व्यवस्था है जिससे विद्यालयों और आश्रम की आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। स्क्रीन प्रिंटिंग इकाई में कलात्मक स्क्रीन प्रिंटिंग होती है।

'कर्म कौशल': आश्रम में निर्माण और मरम्मत के कार्यों के लिये 'कर्म कौशल' नामक कार्यशाला के निम्न विभाग हैं :

1. **'सामग्री की देख-रेख'**: निर्माण एवं मरम्मत की गतिविधियों के लिये यह हार्डवेयर और रंग-रोगन का स्टोर है।

2. **काष्ठशाला** : यह विभाग विद्यालयों और आश्रम के फर्नीचर की मरम्मत करता है। नये निर्माण के साथ-साथ नये खिड़की, दरवाजे भी बनाता है। इस व्यस्त विभाग में विद्यालय के छात्र भी कुशल काष्ठकारों के निर्देशन में व्यावहारिक काष्ठकारी का प्रशिक्षण प्राप्त करते हैं।

3. **चित्र लैमिनेशन** : यहाँ चित्रों के लैमिनेशन का काम होता है।

आश्रम के विभिन्न विभाग 'समाजोपयोगी एवं उत्पादक कार्य' के तहत छात्रों को व्यावसायिक प्रशिक्षण देते हैं।

आश्रम अतिथि सेवा : 'तपस्या' आवासीय भवन में अतिथियों के लिये भी व्यवस्था है। यह उन सभी के

लिये है जो आध्यात्मिक की खोज में हैं और आश्रम में रहकर उसकी मर्यादा का पालन करते हुए सामुदायिक जीवन में भाग लेना चाहते हैं। अतिथियों से आश्रम की स्वच्छता, देखरेख और विकास से सम्बन्धित कार्यों में योगदान की अपेक्षा की जाती है।

प्रायोजक (स्पाँसरशिप) योजनाएं : शैक्षणिक संस्थाओं के अतिरिक्त श्री अरविन्द आश्रम ट्रस्ट देश

भर के विभिन्न विद्यालयों में छात्रों की शिक्षा प्रायोजित कर रहा है।

प्रायोजित छात्र निम्न आय वर्ग के परिवारों से चुने जाते हैं। उन्हें भरसक उनके अपने ही प्रांत में पढ़ाया जाता है जिससे उन्हें भाषा सम्बन्धी कठिनाई ना हो। इन्हें अच्छे आवासीय विद्यालयों में रखा जाता है तथा इनकी पढ़ाई, रहने-खाने, पुस्तकों, यात्रा आदि का सारा व्यय आश्रम वहन करता है।



आगामी कार्यक्रम

29 नवम्बर 2017- प्रांजल भैया का 50वाँ जन्मदिवस- इस दिन आश्रम के युवा और 'मदर इंटरनेशनल स्कूल' के विद्यार्थियों के बीच क्रिकेट मैच का आयोजन किया जाता है।

5 दिसम्बर 2017- श्री अरविन्द का महासमाधि दिवस। पुष्पाजलि व विशेष ध्यान।

2 दिसम्बर-9 दिसम्बर- श्री अरविन्द देहांश स्थापना की 60वीं वर्षगाँठ के उपलक्ष में कार्यक्रम।

25 दिसम्बर 2017- इस दिन मदर इंटरनेशनल स्कूल के 'हॉल ऑफ ग्रेस' में आश्रम के युवाओं द्वारा Fun Games कराये जाते हैं। जिसमें अलग-अलग प्रकार के खेल होते हैं। सब लोग बहुत ही उल्लास के साथ ये खेल खेलते हैं।

31 दिसम्बर 2017- आश्रम के युवाओं द्वारा रात 8:30 पर सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन, कार्यक्रम समाप्ति के बाद समाधि पर दीप दान तथा ध्यान कक्ष में ध्यान। साथ ही नववर्ष कलैण्डर व प्रसाद वितरण होता है।

12 फरवरी 2017- आश्रम स्थापना दिवस।

21 फरवरी 2018- श्रीमाँ का 140वाँ जन्मदिवस।

